हमारी दुआ क़बूल क्यों नहीं होती ?

सहबानुल हिन्द
हज़रत मौलाना अहमद सईद देहलवी (रह०)

हमारी दुआ
क्यों क़ुबूल नहीं होती

लेखक
सहबानुल हिन्द मौलाना अहमद सईद देहलवी (रह०)

दीनी बुक डिपो
2677, मस्जिद काले खां,
दरिया गंज, नई दिल्ली.110002

प्रकाशक

दीनी बुक डिपो

2677, मस्जिद काले खां,
दरिया गंज, नई दिल्ली.110002

September 2001 २०००

Printed at HANSA PLATE PROCESS

विषय-सूची

क्या ? कहां ?

—०—

हमारी हिन्दी किताबें

जन्नत की कुन्जी
पंजसुर: शरीफ़
मुसलमान बीवी
मुसलमान खाविंद
नमाज कैसे पढ़े
रसूलुल्लाह की नातें व सलाम
जुमे के खुत्बे
जरूरत मुस्लिमीन
पचास किस्से
सीरत हजरत आइशा रजि०
आमाले कुरआनी
दीन की बातें या बहिस्ती जेवर
जन्नत की जमानत
दोजख का खटका
मौत का झटका
मेरी नमाज
मियां-बीवी के हुकूक
दरुद व सलाम
रसूलुल्लाह सल्ल० के तीन सौ मौजजे
मसनून और मक्बूल दुआएं
कामियाब फालनामा मय ख्वाबनामा
तब्लीगी छ: बातें
औलिए-ए-हिन्द और पाकिस्तान
नबियों के क़िस्मे, कससुल अंबिया

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम०

हमारी दुआ क्यों क़ुबूल नहीं होती

आजकल आम तौर से मुसलमानों को शिकायत है कि जब हम कोई दुआ मांगते हैं तो उसकी क़ुबूलियत के आसार हमें नहीं मालूम होते और जिस चीज़ को तलब करते हैं वह नहीं मिलती हालांकि ख़ुदा तआला का इर्शाद है—

उद्ऊनी अस्तजिब् लकुम० ادْعُونِي أَسْتَجِبْ لَكُمْ

मुझे पुकारो और मुझसे दुआ मांगो मैं तुम्हारी दुआ क़ुबूल करूंगा।

यह इस शुब्हा का ख़ुलासा है जो आजकल अक्सर लोगों को पेश आया करता है अगरचे मुसलमानों में एक तब्क़ा बदक़िस्मती से ऐसा भी पैदा हो गया है जो दुआ को महज़ झूठ और बेकार चीज़ समझता है उसका ख़याल है कि दुआ एक बाल-तसल्ली से ज़्यादा हैसियत नहीं रखती और दुआ का कोई असर भाग्य के फ़ैसलों पर नहीं पड़ सकता। हमें इस वक़्त उस तब्क़े से न तो बहस करनी है और न यह मुख़्तसर मज़मून इस बहस के लिए है। इन्शा-अल्लाह किसी आइन्दा इशाअत में हम इसके मुतअल्लिक़ अपने ख़यालात का इज़्हार करेंगे जिससे उन लोगों की मज़हबी नावाक़-फ़ियत, उनके झूठे दलाइल और उनकी ग़लतफ़हमी का राज़ खुल

जाएगा। इस वक़्त हमें सिर्फ़ यह बताना है कि दुआ़ किस तरह मांगनी चाहिए। दुआ़ की क़ुबूलियत के आसार क्या हैं। वह कौन-कौन से मौक़े हैं जहां दुआ़ क़ुबूल होती है और इसी क़िस्म की दूसरी चीजें जो दुआ़ से मुतअल्लिक़ हैं, ज़िक्र करनी हैं ताकि आप ख़ुदा से दुआ़ करते वक़्त उन शर्तों व बातों की पाबन्दी करें जो दुआ़ के लिए लाज़िम और ज़रूरी हैं। यह बात भी ध्यान रहे कि किसी मुसलमान की दुआ (जबकि वह बताए गए आदाब की पाबन्दी रखे) रद्द नहीं होती बल्कि हमेशा क़ुबूल होती है। हां यह ज़रूरी है कि कभी जो चीज़ तलब करता है वही इनायत हो जाती है और कभी उस दुआ की बरकत से कोई ख़ास बला और मुसीबत नाज़िल होने वाली थी वह रद्द कर दी जाती है और कभी जल्ले मुजद्दहू की मसालेह ज़ाहिरी आसार मुरत्तब करने में बाधक होती हैं तो उसकी दुआ के बदले में ख़ास अज्र व सवाब महफ़ूज़ कर दिया जाता है। चुनांचे क़यामत में जब बन्दा को वह अज्र अता किया जाएगा जो उस की दरख़्वास्तों और दुआओं के सिला में महफ़ूज़ रखा गया था तो बन्दा इस अम्र की तमन्ना करेगा कि दुनिया में मेरी किसी दुआ का भी असर ज़ाहिर नहीं किया जाता तो अच्छा होता बल्कि वक़्तन-फ़ौक़्तन जो दुआएं मैंने ख़ुदा से मांगी थीं उन सबका आज के दिन मुझे सवाब ही अता कर दिया जाता। पस यह अम्र साबित है कि मुसलमान की दुआ रद्द नहीं होती बल्कि क़ुबूल कर ली जाती है तो बाज़ लोगों का दुआ के बाद यह कहना कि हमारी दुआ क़ुबूल नहीं होती, हज़रते हक़ जल्ले मुजद्दहू की शान में हद दर्जा की गुस्ताख़ी है, क्योंकि ना-क़ुबूलियत का मतलब तो यह है कि जो चीज़ तलब करता था वह भी न मिले, कोई बला जो नाज़िल होने वाली थी वह भी न रोकी जाए और क़यामत में अज्र भी न मिले और जब इन तीनों बातों में से किसी एक का हुसूल यक़ीनी है तो फिर नाक़ुबूलियत का शिकवा न सिर्फ़ झठा बल्कि मज़हबी नावाक़फ़ियत की खुली हुई दलील है।

आदाबे दुआ

१. दुआ करने वाले का खाना-पीना और लिबास हराम माल से न हो और उसकी कमाई भी हराम की न हो बल्कि जो पेशा वह करता है वह हलाल हो।

२. इख़्लास के साथ दुआ मांगी जाए, दिखावे और आडम्बर से न मांगे। ख़ुदा के साथ दुआ में किसी को शरीक न करे।

३. दुआ करने से पहले कोई नेक काम करे मसलन कुछ सदक़ा और ख़ैरात कर दे या नमाज़ पढ़ ले।

४. पाकीज़गी और शुद्धता का ख़याल रखना, और ग़ुस्ल का मौक़ा न हो तो कम से कम वुज़ू ही कर लेना चाहिए।

५. क़िब्ला की तरफ़ मुंह करके और अत्तहीयात के तरीक़े पर बैठ कर दुआ मांगना।

६. दुआ से पहले अल्लाह तआला की हम्द व सना बयान करना और नबी अलै० पर दरूद पढ़ना।

७. दोनों हाथ उठाकर और हाथ की हथेलियां खोलकर दुआ मांगना और दोनों हाथ इस क़दर ऊंचे किये जाएं कि कन्धों और शानों के बराबर हो जायें। जिस वक़्त दुआ के लिए हाथ उठाए जाएं तो सीने के क़रीब न किए जायें बल्कि सामने की सिम्त में बढ़े हुए हों।

८. दोनों हाथों को खुला रखना, यानी कोई कपड़ा वग़ैरह हाथों पर न हो बल्कि कपड़ों से हाथों को निकाल कर दुआ मांगना।

९. दुआ में ख़ुशूअ-ख़ुज़ूअ, (नम्रता) इन्तिहाई अदब, आजिज़ी और मिस्कनत (असहायता) की रिआयत रखना।

१०. इल्हाह यानी गिड़गिड़ा कर दुआ मांगना।

११. अल्लाह तआला के अस्मा-ए-हुस्ना को या अपने किसी नेक काम को या अंबिया और सलहा को वसीला बनाना यानी दुआ में यह कहना कि या अल्लाह मैं तेरे करम और तेरी रहमत को वसीला बनाता हूं या अपने किसी नेक काम का ज़िक्र करके यह कहना— इलाही ! अगर मेरा फ़लां काम तेरे नज़दीक मक़बूल है तो उसके वसीले से मेरी यह दुआ क़ुबूल फ़रमा ले, इसी तरह हज़रात अंबिया अलै० या किसी सालेह और बुज़ुर्ग इन्सान के वसीला से दुआ मांगी जाए ।

१२. आहिस्ता और पस्त आवाज़ से दुआ मांगना ।

१३. दुआ में तकरार करना—सात बार या पांच या कम से कम तीन बार दुआ करना ।

१४. दुआ से पहले अपने पहले जुर्म और गुनाहों का एतराफ़ करना, मसलन ऐ अल्लाह ! मैं बड़ा गुनाहगार हूं ।

१५. दुआ मांगने में तलब से पूरी कोशिश करना । क़ल्ब को मुतवज्जोह (अधिक ध्यान) रखना और पूरी तरह दिल लगाकर चाह और शौक़ से दुआ मांगना । और ख़ुदा से अच्छी उम्मीद रखना । अज़्म को पुख़्ता और इरादा को मज़बूत रखना ।

१६. दुआ मांगने के बाद आमीन कहना ।(अगर कोई इमाम हो तो मुक़्तदियों को भी आमीन कहनी चाहिए ।)

१७. हर छोटी-बड़ी हाजत को ख़ुदा ही से मांगना ।

१८. ऐसे अल्फ़ाज़ के साथ दुआ मांगना कि अल्फ़ाज़ थोड़े हों और मानी ज़्यादा हों और ऐसे अल्फ़ाज़ हों जो दीन व दुनिया की ज़रूरतों को शामिल हों । मसलन्—

رَبَّنَآ اٰتِنَا فِی الدُّنْیَا حَسَنَۃً وَّفِی الْاٰخِرَۃِ حَسَنَۃً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ

रब्बना आतिना फ़िद्दुन्या ह-सनतंव-व फ़िल्-आख़िरति ह-सन-तंव-व क़िना अज़ाबन्नार०

१९. दुआ में अपने नफ़्स को, अपने मां-बाप को और तमाम मुसलमान भाइयों को मुक़द्दम करना यानी पहले इन चीज़ों का दुआ में ज़िक्र करना।

२०. दुआ करते वक़्त आसमान की तरफ़ नहीं देखना चाहिए बल्कि निगाह नीचे रखें क्योंकि अदब का तक़ाज़ा यही है।

२१. दुआ में क़ाफ़ियाबन्दी (कविता) या बतकल्लुफ़ क़ाफ़िया-बन्दी की कोशिश से बचना चाहिए।

२२. दुआ में गाने का तरीक़ा इख्तियार न करे। (इस अदब की सनद नहीं मिली।)

२३. गुनाह या अलगाव की दुआ न मांगे।

२४. दुआ में ख़ुदा की रहमत को तंग न करे (मसलन यों न कहे कि या अल्लाह मुझ को रोज़ी दे और किसी को न दे वग़ैरह)।

२५. जो चीज़ आदतन मुहाल हो उसकी दुआ न मांगे (मसलन मुझे जवान बना दे, या मैं कभी न मरूं या मेरा क़द छोटा हो जाए, या सूरज न निकले वग़ैरह)।

२६. दुआ की क़ुबूलियत में जल्द न करे यानी मैंने दुआ मांगी थी अभी तक क़ुबूल न हुई, जल्दी से मेरी दुआ क़ुबूल कर, इसी तरह यह भी न कहे कि मैंने दुआ मांगी थी वह क़ुबूल न हुई।

२७. दुआ से फ़ारिग़ होने के बाद दोनों हाथों को मुंह पर फेरना।

मज़मून के लम्बे होने की वजह से हमने उन दलीलों को छोड़ दिया है जिनसे दुआ के यह तमाम आदाब अख़्ज़ (ग्रहण) किए गए हैं।

इजाबत (क़ुबूलियत) की घड़ियां

१. शबे क़द्र, रमज़ान शरीफ़ की २१, २३, २२, २७, और २९ रात,

२. यौमे अरफ़ा (ज़िल्हिज्जा की नवीं तारीख़),

३. शहरे रमज़ान (पूरा का पूरा महीना),

४. जुमा की शब,

५. जुमा का दिन,

६. जुमा के दिन का ख़ास मुहूर्त, इस घड़ी के निश्चय करने के मुतअल्लिक़ तक़रीबन चालीस क़ौल हैं, ज़्यादा मशहूर और सही दो क़ौल हैं—एक यह कि जिस वक़्त इमाम खुत्बा पढ़ने के लिए मिंबर पर आकर बैठे उस वक़्त से नमाज़ का सलाम फेरने तक खुसूसन जब कि वह सूर-ए-फ़ातिहा शुरू करे तो वलज़्ज़ाल्लीन कहने तक, इस वक़्त की ज़्यादा उम्मीद है, दूसरा क़ौल यह है कि जुमा के दिन अस्र की नमाज़ के बाद से ग़ुरूबे आफ़ताब तक यह घड़ी होती है,

७. रात में दुआ करना ख़ासकर आधी रात के बाद,

८. रात का पहला तीसरा हिस्सा यानी रात के अगर तीन हिस्से किए जायें तो उन में से पहला हिस्सा। अगर रात १२ घंटे की हो, ६ बजे सूरज डूबता हो और ६ बजे निकलता हो तो रात के दस बजे तक का वक़्त,

९. रात का पिछला तीसरा हिस्सा—१२ घंटे की रात में २ बजे से ६ बजे तक,

१०. आख़िरी रात का छठा हिस्सा,

११. सुबहे सादिक़ (सुबह की सफ़ेदी) के वक़्त,

१२. नमाज़ के लिए जब मोज़्ज़िन अज़ान दे यानी अज़ान के वक़्त कोई शख़्स अज़ान सुनकर दुआ मांगे तो क़ुबूल होती है,

१३. अज़ान और तक्बीर का दरम्यानी वक़्त,

१४. तक्बीर शुरू होने के वक़्त,

१५. हय्य अलस्सला: और हय्य अलल्फ़लाह के बाद खुसूसन उस शख़्स के लिए जो रंज व मुसीबत में मुब्तिला हो,

१६. जिहाद की सफ़ में जब कोई शख़्स खड़ा हो,

१७. इस्लामी लश्कर जब कुफ़्फ़ार से लड़ते-लड़ते मिल जाए,

यानी जब घमासान की लड़ाई हो रही हो,

१८. फ़र्ज़ नमाज़ के बाद,

१६. सज्दे की हालत में जब सज्दा करे,

२०. तिलावते क़ुरआन शरीफ़ के बाद,

२१. ख़त्मे क़ुरआन के बाद ख़ासकर क़ारी क़ुरआन की अख़ैर में, हाफ़िज़ ने क़ुरआन शरीफ़ ख़त्म किया है, उसकी दुआ सुनने वाले के एतबार से ज़्यादा मक़बूल है,

२२. जब इमाम वलज़्ज़ाल्लीन कहे—यह वक़्त भी दुआ की क़ुबूलियत का है,

२३. ज़मज़म शरीफ़ का पानी पीने के वक़्त,

२४. पिछली रात में मुर्ग़ की अज़ान के वक़्त,

२५. जहां मुसलमान कसरत से जमा हों, मसलन ईद, जुमा, अरफ़ात,

२६. मजालिसे ज़िक्र में,

२७. मुर्दे की आंखें बन्द करते वक़्त यानी जिस वक़्त रूह परवाज़ हो और लोग मय्यत की आंखें और मुंह बन्द करने लगें (यह वक़्त भी दुआ की क़ुबूलियत का है) या मुर्दे के पास हाज़िर होने की हालत में,

२८. जिस वक़्त बारिश हो रही हो, और काबा शरीफ़ को देखते वक़्त ।

वह जगहें जहां दुआ क़ुबूल होने की उम्मीद की जाती है

१. जो जगह किसी शरई एतबार से पाक हो वहां बैठकर दुआ मांगने से क़ुबूल होती है,

२. मस्जिदुलहराम,

३. मस्जिदे नबवी,

४. मस्जिदे अक़्सा (यानी बैतुलमुक़द्दस की मस्जिद),

५. मताफ़ यानी वह जगह जहां जहां खान-ए-काबा का तवाफ़ करते हैं,

६. मुल्तज़िम यानी संगे असवद और खान-ए-काबा के दरवाज़े की चौखट का दरम्यानी हिस्सा,

७. खान-ए-काबा के अन्दर दाखिल होकर,

८. ज़मज़म शरीफ़ के पास,

९. सफ़ा और मरवह के पहाड़ पर,

१०. सफ़ा-मरवह के दरम्यान दौड़ने की जगह जिसको सई कहते हैं,

११. मुक़ामे इब्राहीम के पीछे,

१२. अरफ़ात जहां नवीं तारीख को हाजी जमा होते हैं,

१३. मुज़्दलफ़ा जहां अरफ़ात से वापस आकर रात को क़याम करते हैं,

१४. मिना, जहां हज के बाद तीन दिन तक क़याम करते हैं,

१५. जुमेरात सलासा, वह तीनों जगहें जहां कंकरियां मारी जाती हैं,

१६. मीज़ाबे रहमत के नीचे यानी काबा की छत के परनाले के नीचे,

१७. सरकारे दोआलम सल्ल० की क़ब्रे मुतह्हर व मुबारक के क़रीब,

१८. बैनुल्जलालतीन यानी सूर-ए-अन्आम की वह आयत जिसमें दो जगह लफ़्ज़ अल्लाह लगातार आया है—एक दफ़ा अल्लाह कह कर दुआ मांगना और फिर दूसरे लफ़्ज़ अल्लाह के शुरू में करना—इन दोनों नामों के दरम्यान भी दुआ मांगना मक़्बूल है। आयत निम्न है। मक़ामे दुआ में फ़ासिला कर दिया जाता है ताकि लोगों को समझने में दुशवारी न हो—

इज़ा जाअत्हुम् आयतुन् क़ालू लन्-नू मि-न हत्ता नूति-य मिस्ल मा ऊति-य रुसुलुल्लाहि अल्लाहु आलमु हैसु यज्अलु रिसालतः०

जब आती है उनके पास कोई निशानी तो वह काफ़िर कहते हैं कि हम ऐसा नहीं लायेंगे, यहां तक कि दे दी जायें हमको वह चीज़ें जो रसूलुल्लाह सल्ल० को दी गयी हैं। अल्लाह तआला ख़ूब जानता है कि किस जगह रिसालत दी जाए।

إِذَا جَاءَتْهُمْ آيَةٌ قَالُوا لَنْ نُؤْمِنَ حَتَّىٰ نُؤْتَىٰ مِثْلَ مَا أُوتِيَ رُسُلُ اللَّهِ اللَّهُ أَعْلَمُ حَيْثُ يَجْعَلُ رِسَالَتَهُ -

वह लोग जिनकी दुआ क़ुबूल होती है

१. मुज़्तर यानी इन्तिहाई बेक़रार।

२. मज़्लूम, चाहे यह मज़्लूम फ़ासिक़ व फ़ाजिर (खुले आम गुनाह कबीरा करने वाला) और काफ़िर ही क्यों न हो, यानी मज़्लूम अगर काफ़िर भी हो तो उसकी दुआ क़ुबूल होती है। काफ़िरों की दुआ के मुतअल्लिक़ बहुत से लोगों को शुब्हा हुआ है और उन्होंने—

وَمَا دُعَاءُ الْكٰفِرِيْنَ اِلَّا فِىْ ضَلٰلٍ ـ

व-मा दुआउल्-काफ़िरी-न इल्ला फ़ी ज़लाल०

नहीं है दुआ काफ़िरों की मगर गुमराही में।

से दलीलें भी दी हैं जो सही नहीं है। एक मौक़ा पर मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादयानी ने भी इस आयत से निहायत ग़लत और शर्मनाक दलील दी है लेकिन हमें अफ़सोस है कि हम इस वक़्त किसी नई बहस को छेड़ना नहीं चाहते। मिर्ज़ा का तो ज़िक्र ही बेकार है। जिस शख़्स से हज़रत जल्ले मुजद्दहू ने अक़्ले सलीम और फ़िक्रे सहीह ही सलब (हड़प) कर लिया हो और जिसका इल्म ही इस गुमराही और ज़लालत का कारण हो उसका शिकवा ही बेकार है अलबत्ता दूसरे और उलमा ने कुफ़्फ़ार की दुआ के मुतअल्लिक़ जो दलील की बातें कही हैं उस का हज़राते मुहक़्क़िक़ीन (सच की पहचान करने वाले लोगों) ने काफ़ी जवाब दे दिया है और सही चीज़ यही है कि दुआ कुफ़्फ़ार की भी मस्मूअ (सुनने के क़ाबिल) है और खासकर काफ़िरे मुज़्तर की। बाक़ी रही नाक़ुबूलियत तो यह दूसरी बात है।

३. वालिद की दुआ अपनी औलाद के हक़ में, (उलमा ने

व्याख्या की है कि वालदा की दुआ का भी यही हुक्म है,) वालिद की दुआ चाहे अच्छी हो या बुरी, औलाद के हक़ में ऐसी है जैसे नबी की दुआ अपनी उम्मत के हक़ में।

४. इमाम आदिल और मुंसिफ़ हाकिम—इनसे मुराद मुसलमान है इसलिए काफ़िर मुसलमानों का इमाम या हाकिम नहीं हो सकता बल्कि काफ़िर को मुसलमानों पर किसी हैसियत से भी हक़्क़े विलायत व हुकूमत हासिल नहीं—

وَلَنْ يَّجْعَلَ اللّٰهُ لِلْكَافِرِيْنَ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ سَبِيْلًا ـ

व लंय-यज्अलल्लाहु लिल्-काफ़िरी-न अलल्-मुअ्मिनी-न सबीला०

और हरगिज़ खुदा तआला काफ़िरों को मोमिनों पर ग़लबा का रास्ता नहीं देता।

५. रजले सालेह और नेक मर्द की दुआ बशर्ते कि वह किसी गुनाह या अलगाव की दुआ न करे।

६. नेक और फ़रमांबरदार औलाद की दुआ अपने मां-बाप के हक़ में।

७. मुसाफ़िरों की दुआ हालते सफ़र में (दुआ चाहे अपने लिए हो या ग़ैर के लिए)।

८. रोज़ेदार की दुआ इफ़्तार के वक़्त।

९. एक मुसलमान की दुआ दूसरे मुसलमान भाई के लिए उस की ग़ैबत में (यानी एक मुसलमान अगर दूसरे मुसलमान को उसको पीठ-पीछे दुआ दे तो यह दुआ भी क़ुबूल होती है, ग़ैबत की क़ैद इस लिए लगाई गई कि यह दुआ मुख्लिसाना होगी, सामने की दुआ में दिखावा और खुशामद शामिल हो सकती है।

१०. हर मुसलमान की दुआ बशर्ते कि वह ज़ुल्म या अलगाव की दुआ न करे और दुआ के बाद वह भी न कहे कि मैंने दुआ की थी मगर क़ुबूल न हुई।

११. तौबा करने वाले की दुआ। (जो शख़्स अपने गुनाह से तौबा करता है और तौबा के बाद कोई दुआ करता है तो वह दुआ क़ुबूल कर ली जाती है मतलब यह है कि जो लोग तौबा में देर नहीं लगाते बल्कि जुर्म के होने के साथ फ़ौरन ही तौबा कर लेने के आदी हैं, उन की दुआएं भी मक़्बूल होती हैं।)

१२. जो शख़्स रात को नींद से चौंक कर यह दुआ पढ़े—

لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاللّٰهُ اَكْبَرُ وَلَا حَوْلَ وَلَا قُوَّةَ اِلَّا بِاللّٰهِ اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِيْ ۔

ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क ल-हू ल-हुल्मुल्कु व ल-हुल्हम्दु व हु-व अला कुल्लि शैइन क़दीर० अल्हम्दु लिल्लाहि ला इलाह इल्लल्लाहु वल्लाहु अक्बरु व-ला हौ-ल व-ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि अल्लाहुम्मग़्फ़िर्ली०

अल्लाह तआला के सिवा और कोई माबूद नहीं, उसी की हुकूमत और उसी की तारीफ़ है और वह हर चीज़ पर क़ुदरत रखता है। हर तरह की तारीफ़ें अल्लाह ही को सज़ावार हैं, नहीं है कोई हक़ीक़ी माबूद और कमाले क़ुव्वत का मालिक मगर अल्लाह। ऐ अल्लाह! मेरी मग़्फ़िरत फ़रमा दे।

या इसके अलावा कोई और दुआ करे तो वह मक़्बूल हो जाती है और अगर यह चौंकने वाला इन्सान ज़रा हिम्मत करके वुज़ू कर ले और थोड़ी-सी नमाज़ पढ़ ले तो यह नमाज़ भी मक़्बूल हो जाती है। सोते हुए आदमी को कभी हज़रते हक़ जल्ले मुजद्दहू की जानिब से इसलिए जगाया जाता है कि बन्दा उठकर कुछ इबादत कर ले और जब इस ग़रज़ के लिए जगाया गया था और बन्दा ने वह पूरी कर ली तो फिर कोई वजह नहीं कि उसकी दुआ क़ुबूल न की जाए।

१३. जो शख़्स—

يَا ذَا الْجَلَالِ وَالْاِكْرَامِ -

या ज़ुल्जलालि वल्इक्राम०
ऐ साहबे बुज़ुर्गी और बख़्शिश वाले।
कहकर दुआ मांगता है तो उसकी दुआ क़ुबूल होती है।

१४. जब कोई शख़्स—

يَا اَرْحَمَ الرَّاحِمِيْنَ -

या अर्हमर्राहिमीन०
कहकर दुआ मांगता है तो उसकी दुआ भी क़ुबूल कर ली जाती है। (तीन बार इस कलिमा को जब कोई मुसलमान कहता है तो फ़रिश्ता उस बन्दे को मुख़ातिब करते हुए कहता है—अर्हमर्राहिमीन तेरी तरफ़ मेहरबान है, मांग क्या मांगता है।)

१५. जब कोई बन्दा तीन बार ख़ुदा से जन्नत तलब करता है तो जन्नत हक़ जल्ले मुजद्दहू की बारगाह में अर्ज़ करती है—

اَللّٰهُمَّ اَدْخِلْهُ الْجَنَّةَ -

अल्लाहुम्-म अद्ख़िल्हुल् जन्नः ०
या अल्लाह इसे जन्नत में दाख़िल कर दे।
और जब कोई बन्दा दोज़ख़ से तीन बार पनाह मांगता है तो दोज़ख़ अर्ज़ करती है—

اَللّٰهُمَّ اَجِرْهُ مِنَ النَّارِ -

अल्लाहुम्-म अजिर्हु मिनन्नार ०
या अल्लाह इस बन्दे को आग से बचा ले।

१६. हुज्जाज की दुआ, जब तक हाजी अपने घर लौटकर न आ जाए, उसकी दुआ मक़बूल होती है।

१७. जो मुसलमान अपनी किसी हाजत के लिए नीचे के

कलिमात पढ़ेगा उसकी हाजत पूरी कर दी जाएगी—

لَا إِلٰهَ إِلَّا أَنْتَ سُبْحَانَكَ إِنِّي كُنْتُ مِنَ الظَّالِمِينَ۔

ला इला-ह इल्ला अन्-त सुब्हान-क इन्नी कुन्तु मिनज्ज़ालिमीन॰

तेरे सिवा कोई माबूद नहीं, तेरी ज़ात पाक है, बेशक मैं ज़ुल्म करने वालों में हूं।

यह दुआ हज़रत ज़ुन्नून, यूनुस अलै॰ की है और निहायत मुजर्रब (फायदेमन्द) है।

१८. जो शख़्स अज़ान के बाद निम्न दुआ पढ़ता है उसकी यह दुआ क़ुबूल कर ली जाती है और क़ियामत में सरकारे दोआलम सल्ल॰ की शफ़ाअत उसको मयस्सर होगी—

اَللّٰهُمَّ رَبَّ هٰذِهِ الدَّعْوَةِ التَّامَّةِ وَالصَّلٰوةِ الْقَائِمَةِ
اٰتِ مُحَمَّدَنِ الْوَسِيْلَةَ وَالْفَضِيْلَةَ وَالدَّرَجَةَ
الرَّفِيْعَةَ وَابْعَثْهُ مَقَامًا مَّحْمُوْدَانِ الَّذِيْ وَ
عَدْتَّهٗ اِنَّكَ لَا تُخْلِفُ الْمِيْعَادَ۔

अल्लाहुम्-म रब्-ब हाज़िहिद्-दअ़्वतित्-ताम्-मति वस्सलातिल्-क़ाइमति आति मुहम्म-द-निल्-वसील-त वल्-फ़ज़ील-त वद्-र-ज-तर्रफ़ी-अ-त वब्अ़्सहु मक़ामम्-महमूदा निल्लज़ी व अत्तहू इन्न-क ला तुख़्लिफ़ुल्-मीआ़द॰

ऐ अल्लाह इस पुकार के रब और इस क़ायम होने वाली नमाज़ के रब मुहम्मद सल्ल॰ को वसीला और फ़ज़ीलत अता फ़रमा और उनको उस मक़ामे महमूद में भेज जिसका तूने वादा किया है, बेशक तू अपने वादा का ख़िलाफ़ नहीं रखता।

१९. जो शख़्स आम मोमिनीन व मोमिनात के लिए हर दिन में २७ या २५ बार इस्तिग़फ़ार करता है वह उन लोगों में दाख़िल कर

लिया जाता है जिन की दुआ मुस्तजाब (क़बूल होने लायक़) है और जिनकी बरकत से अहले ज़मीन को रोज़ी अता होती है।

इजाबाते दुआ (दुआ का क़बूल होना) के अलामात

१. डर लगना, ख़ौफ़ मालूम होना, क़ल्ब पर ग़ैर-मामूली हैबत का तारी (छा जाने वाला) होना।

२. बदन के रोंगटों का खड़ा हो जाना।

३. आंखों से आंसुओं का टपक जाना।

४. हैबत तारी हो जाने के बाद दिल में सुकून का पैदा हो जाना, क़ल्ब में ख़ुशी और मसर्रत का पैदा हो जाना। ज़ाहिर में तबीयत का हल्का होना, ऐसा महसूस होना कि ,मुझ पर एक बोझ था जो उतर गया।

जब दुआ मांगने वाले पर इस क़िस्म की कैफ़ियत तारी हो तो हज़रते हक़ जल्ले मुजद्दहू का शुक्रिया अदा करके ख़ुदा की हम्द बयान करे, अल्लाह की राह में सदक़ा दे। हज़रत आयशा रज़ि० फ़रमाती हैं कि जब किसी शख़्स को अपनी दुआ की क़ुबूलियत मालूम हो, या किसी बीमार को शिफ़ा हासिल हो या कोई ग़ायब मफ़क़ूदुल ख़बर (जिस की ख़बर न मिले) सफ़र से वापस आ जाए तो उस को यह दुआ पढ़नी चाहिए—

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِىْ بِعِزَّتِهٖ وَجَلَالِهٖ وَبِنِعْمَةِ الصَّالِحَاتِ۔

अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी बिइज़्ज़ति-ही व जला-लिही व बिनिअ्म-ति-स्सालिहात०

दुआ के मुतअल्लिक़ अभी और चन्द बातें भी बाक़ी हैं जो बहुत तफ़सील की मुहताज हैं, लेकिन हमारा ख़याल है कि जिस क़दर लिख दिया गया है वह भी आम मुसलमानों के लिए काफ़ी है। ख़ुदा तआला मुसलमानों को अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए।

(१ अक्तूबर १९२८ ई०)

सरकारे मदीना सल्ल० की बारगाह में अर्ज़-नियाज़

ऐ सबसे बेहतरीन ज़ात जिनकी हड्डियां बे-आब-व-गयाह मैदान में मदफ़ून हैं पस उन हड्डियों की पाकीज़गी की वजह से यह मैदान और टीले भी पाकीज़ा हो गये हैं। मेरी जान उस क़ब्र पर फ़िदा हो है जिसमें आप फ़र्दे-कश (एकाकी) हैं वह क़ब्र पाकदामनी, सखावत और करम से भरी हुई है और सलात व सलाम नाज़िल हो आप पर ऐ अल्लाह के प्यारे हबीब।

मेरे मौला मेरे आक़ा हुज़ूर सल्ल० का एक गुनहगार उम्मती दूर-दराज़ का सफ़र करके ख़िदमत में हाज़िर हुआ है। ऐ दोनों जहां के बादशाह! आपको कुछ अपनी बेबस उम्मत की भी खबर है। ऐ नवेदे खलील व मसीह (अलै०) जिस दीन की ख़ातिर आपने बहुत-सी मुसीबतें बर्दाश्त कीं, अपने और बेगानों से बुराई उठाई, लोगों की गालियां सुनीं, पत्थर खाये, ज़ख्म उठाये, रातों की नींद और दिन की भूक खोई। जिस दीन के लिए आप जिलावतन किये गये, आपको और आपके अहलो अयाल को बेघर किया गया—वह आप का दीन और उसके नामलेवा दुश्मनों के घेरे में हैं। ऐ दीन व दुनिया के मालिक! आज तेरी उम्मत की आबरू सख्त ख़तरे में है। मुसलमान टुकड़े-टुकड़े को मुहताज हैं। ज़मीन अपनी उस्अत व पहनाई (फैलाव) के बावजूद उन पर तंग है। यूरोप, एशिया और अफ्रीका के किसी कोने में भी उनके रहने को जगह नहीं है। दुनिया के क़ाफ़िरों ने तेरी बेकस और मज़लूम उम्मत के लिए एका कर

लिया है, बुतपरस्तों ने क़सम खायी है कि खुदाए वहदहू लाशरीक की पूजा को दुनिया से मिटाकर छोड़ेंगे। सलीबपरस्तों ने अहद किया है कि वह आलम से तेरी फैलायी हुई तौहीद को मिटा देंगे। ऐ दीन व दुनिया के मालिक ! तुझे कुछ खबर भी है जिस दरख़्त को तूने और तेरे सहाबा (रज़ि०) ने अपने खून से सरसब्ज़ किया किया था, दुश्मन उसको जड़ से उखाड़ने की फ़िक्र कर रहे हैं। मस्जिदों को बुतखाना बनाने की कोशिश की जा रही है और अज़ान व इमामत के मीनारों पर घण्टे और नाक़ूस बजाने की फ़िक्र है। जिन मुल्कों को तेरे नाम लेने वालों ने अपना खून बहाकर फ़तह किया था, जिस ज़मीन पर तौहीद के चाहने वालों की बरसों अज़ानें गूंजी थीं, आज वह ग़ैरों के क़ब्जो में हैं, आज वहां शिर्क व कुफ़्र की खुलेआम इशाअत हो रही है।

اَغِثْنِیْ یَارَسُوْلَ اللّٰہِ -

अग़िस्नी या रसूलल्लाह०

दरसी कीजिए ऐ रसूलुल्लाह सल्ल० ! हम बेकस हैं, लाचार है। दुनिया के इतने बड़े क्षेत्र में हमारी हालत वही है जो तेरे निवासा मुस्लिम बिन अक़ील रज़ि० की कूफ़ा में थी। हम बेकसों का न कोई यार है न मददगार, न हमारा कोई हिमायती है न ग़मगुसार। या रसूलल्लाह सल्ल० हम अपना दर्द किसे सुनायें, अपनी फ़रियाद कहां ले जायें। ऐ ताजदारे मदीना ! जिन ज़मीनों को हमने गुलामी से आज़ाद कराया था, आज हम खुद वहां ग़ुलाम हैं। आप पर, आपके क़ुरआन पर, आपके खुदा पर शबो रोज़ खुलेआम तान व तश्नीअ (बुराइयां) किये जाते हैं, फ़ब्तियां उड़ाई जाती हैं। खुद आपके नामलेवा आपके दीन को नुक़सान पहुंचाने के दर पे हैं। मुसलमानों के पास न हुकूमत है न सेनअत (खेती-बारी), न तिजारत हैं, न इमारत (दौलत) और न बाहमी उख़ूवत (आपसी भाईचारा)।

यूरोप से निकाले गये, अफ़्रीक़ा से बेदखल किये गये। इराक़ व फ़िलस्तीन जा चुके, हिन्दुस्तान छिन गया।

अब ऐ मेरे मौला! दुश्मनों की नज़रें आपकी ख्वाबगाह पर पड़ रही हैं। दुश्मनों का असर हिजाज़ पर पहुंच चुका है। रेगिस्तानी बद्दू आहिस्ता-आहिस्ता यूरोपी तहज़ीब पर क़ुर्बान हो रहे हैं। हिजाज़ मक़्दिस की हदों और उसकी चारदीवारी तक दुश्मनों की तोपें पहुंच चुकी हैं।

हुज़ूरे वाला अगर यही लैलो नहार (रात-दिन) हैं और सरकार की शाने बेनियाज़ी इसी तरह क़ायम है, तो आखिर क्या होगा। यह मुसल्लम कि हम गुनहगार हैं, यह माना कि हम नालायक़ हैं, यह तस्लीम कि हम में न सिद्दीक़ रज़ि० का-सा इल्म है और न फ़ारूक़ रज़ि० जैसी शौकत और न उस्मान रज़ि० जैसी सखावत है और न अली व खालिद रज़ि० की-सी शुजाअत (बहादुरी) है और अबू हुरैरा रज़ि० और अबू ज़र रज़ि० जैसा अमल भी नहीं। बिलाली मुहब्बत भी खत्म हो चुकी है। अब तक जो कुछ हुआ वह हमारी ही ग़फ़लत का नतीजा था। जो दीन हम हिजाज़ से लेकर निकले थे, उसकी हिफ़ाज़त हम से न हो सकी। हम तेरे दीन को नज़रे ब्रह्मन कर बैठे। तेरह सौ बरस की कमाई हमारी ही नालायक़ी से लुट गयी। यह सब कुछ हमने किया और हमें अपनी ग़लती का एतराफ़ है। हमारे सरदार हम क़ुसूरवार व खतावार हैं। यह सब कुछ है, लेकिन आखिर तेरे हैं, तेरे दीन के नामलेवा हैं, हमें ग़ैरों के सामने रुसवा न कर, दुश्मनों को हम पर हंसने का मौक़ा न दे।

ऐ हमारे आक़ा! हमारी ज़िल्लत की इन्तिहा हो चुकी। इससे ज़्यादा हमको ज़लील न होने दे। कुफ़्फ़ार हम पर हंसते हैं। हमें ताने देते हैं। हमारी जान, हमारी औलाद, हमारे ईमान के दर पे हैं।

ऐ फ़ख्रे दोजहां! ऐ पेशवा-ए-कौनो मकां! आखिर यह बे-नयाज़ी कब तक, किस चीज़ का इन्तिज़ार है, किस वक़्त के मुन्तज़िर

हैं, कौन-सी बात बाक़ी है—मंज़िल का आख़िरी दौर है।

उठिए, ख़ुदा के लिए उठिए! अपनी उम्मत की डूबती हुई कश्ती को सहारा दीजिए। मेरे आक़ा उठिए, फ़ातिमा रज़ि० का वास्ता, उठिए और एक दफ़ा निगाहे रहमत से अपनी उम्मत के गुनहगारों को देख लीजिए, उठिए, शहीदाने करबला का वास्ता, उठिए, और अपनी बुज़दिल उम्मत को फिर एक दफ़ा दीन पर मिटने की तालीम दे दीजिए। आप की उम्मत सख़्त बेताबी व बेचैनी में मुब्तिला हो चुकी है, ख़ैर की गुंजाइश नहीं है। हुज़ूरे वाला अगर कुछ अरसा खबर न ली गयी तो दुनिया में मुस्लिम क़ौम का खात्मा हो जाएगा। तौहीदे इलाही के बजाय सिर्फ़ कुफ़्र व शिर्क ही की हुकूमत होगी, इसलिए उठिए और हम बदनसीबों को एक दफ़ा देख लीजिए। हम जानते हैं कि आप की एक निगाह में सब कुछ है। अगर आपने हमारी दरख़ास्त क़ुबूल कर ली तो इस मुरझाये हुए दरख़्त में दोबारा बहार आ जाएगी। आपकी एक निगाहे करम में गुनहगारों का बेड़ा पार होता है, इसलिए उठिए, ख़ुदा के प्यारे उठिए और फ़क़ीरों की झोलियां भर दीजिए। आशिक़ दामने मुराद फैलाए खड़े हैं, उन्हें मायूस न कीजिए, बहुत-सी ख़ुशनसीब जानें आप पर क़ुर्बान होने को तड़प रही हैं और बहुत-सी नेक और अच्छी रूहें अपनी क़ुर्बानी का तोहफ़ा अपने दामन में लिए हुए बाबुस्सलाम पर आपकी मुन्तज़िर हैं।

बहुत से मुश्ताक़ बाबे रहमत और बाबे जिबरईल पर अपने दिल मुट्ठियों में लिए बैठे हैं और आप की तशरीफ़आवरी का इन्तिज़ार कर रहे हैं। हिन्दुस्तान के बदनसीब मुसलमान, आह बदक़िस्मत और मुसीबतज़दा मुसलमानों ने अपनी आंखों का फ़र्श बिछा रखा है, इसलिए उठिए, बिलाल जशी रज़ि० का सदक़ा उठिए और टूटे हुए दिलों की, रोती हुई आंखों की, तड़पती हुई रूहों की लाज रख लीजिए। (१६ सितम्बर १६२० ई०)

रसूले अकरम सल्ल० का एक खुत्बा

हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ि० फ़रमाते हैं कि शाबान की आख़िरी तारीख़ में (जबकि दूसरे दिन रमज़ानुल्मुबारक का महीना शुरू होने वाला था) जनाब सैयदुलमुर्सलीन सल्ल० ने एक हल्की-फुल्की व आलंकारिक शैली में खुत्बा फ़रमाया, जिस में रमज़ान के फ़ज़ायल और रोज़े की फ़ज़ीलत पर मुफ़स्सल बहस फ़रमायी और सहाबा रज़ि० को पूरे तरीक़े से रमज़ान शरीफ़ के इस्तिक़बाल पर आमादा करते हुए इर्शाद फ़रमाया—

तर्जुमा—लोगो ! एक बाबरकत महीना तुम पर रक्षा व कृपा करने वाला है। इस महीने में एक ऐसी रात है जिसकी इबादत हज़ार महीनों से बेहतर है। अल्लाह तआला ने इस महीने के रोज़े फ़र्ज़ किये हैं। रात का क़याम मुस्तहब है। इस महीने के फ़र्ज़ का सवाब दूसरे महीनों के सत्तर फ़र्ज़ों के बराबर है। यह महीना सब्र का है और सब्र का बदला जन्नत है। यह महीना बाहमी सुलूक और ग़मख़्वारी का है। इस महीने में मोमिन का रिज़्क़ बढ़ा दिया जाता है। जिसने किसी रोज़ादार का रोज़ा खुलवा दिया तो उसके गुनाह बख़्श दिए जाते हैं, दोज़ख़ से आज़ाद कर दिया जाता है। रोज़ा खुलवाने वाले को रोज़ा रखने वाले के बराबर सवाब होता है और रोज़ा खोलने वाले के सवाब में कोई कमी नहीं होती।

तर्जुमा—लोगों ने कहा या रसूलल्लाह सल्ल० हम सब तो इतनी सामर्थ्य नहीं रखते कि किसी रोज़ादार को इफ़्तार करायें और उसको खाना खिलायें। इर्शाद फ़रमाया—सिर्फ़ एक खजूर से या दूध और पानी के घूंट से रोज़ा खुलवा देना भी काफ़ी है। इस महीने के अव्वल दस दिन रहमत के हैं, दूसरा हिस्सा मग़फ़िरत का है और

तीसरा हिस्सा दोज़ख से आज़ादी का। इस महीने में चार काम बहुत ज़रूरी हैं—दो तो ऐसे हैं कि जिनसे तुम्हारा परवरदिगार राज़ी हो जाता है और दो ऐसे हैं जिनके बग़ैर तुमको चारा नहीं, इन चार में से एक तो कलम-ए-शाहदत है और दूसरे इस्तिग़फ़ार की कसरत—यह दोनों बातें ख़ुदा को बहुत पसन्द हैं, तीसरे जन्नत का तलब करना, और दोज़ख से पनाह मांगना—यह दोनों बातें तुम्हारे लिए सख़्त ज़रूरी हैं। रोज़ेदार को क़यामत में मेरे हौज़ से पानी पिलाया जाएगा फिर उस को जन्नत में दाख़िल होने तक प्यास न लगेगी।

नबी करीम सल्ल० के तमाम वाज़ का ख़ुलासा यह है

ऐ लोगो ! खुदा का एक बुज़ुर्ग और मुबारक महीना जो बहुत-सी ख़ूबियों का मज्मूआ है, यह तुम पर रक्षा व कृपा करने वाला है। इस महीने में एक रात ऐसी मर्तबा वाली है जिसमें इबादत करना एक हज़ार महीनों की इबादत के बराबर है।

अल्लाह तआला ने इस महीने के रोज़े फ़र्ज़ कर दिये हैं लेकिन रात का जागना और इबादत करना बजाय फ़र्ज़ के मुस्तहब रखा है लेकिन इस महीने का मुस्तहब भी सवाब में दूसरे महीने के फ़र्ज़ के ही मानिन्द है और इस महीने के एक फ़र्ज़ का सवाब दूसरे महीनों के सत्तर फ़र्ज़ों के सवाब की मिस्ल है। यह महीना सब्र और ज़ब्ते नफ़्स का महीना है। सब्र का बदला तो जन्नत ही है। इस महीने में ख़ास तौर पर आपसी रवादारी और एक-दूसरे की ग़मख़्वारी करनी चाहिए। इस महीने में मुसलमानों के रिज़्क़ और उनकी रोज़ी में ज़्यादती कर दी जाती है। अगर कोई शख़्स अपने भाई का रोज़ा खुलवा दे तो उसको एक ग़ुलाम आज़ाद करने का सवाब भी मिलता है और तमाम गुनाह भी माफ़ कर दिये जाते हैं और अगर किसी ने रोज़ा खुलवाकर खाना भी खिला दिया तो न सिर्फ़ तमाम गुनाहों से मग़्फ़िरत बल्कि क़यामत में मेरे हौज़ से पानी की सेराबी का वादा भी उसके लिए है और हौज़े कौसर का पानी जिसने एक दफ़ा क़यामत में पी लिया तो उसको कभी भी प्यास की तकलीफ़ न दी जाएगी और उसके सवाब में से कुछ कम न होगा यानी रोज़ा खोलने वालों का सवाब बिना काम हुए रोज़ा खुलवाने वाले को एक और रोज़ा का

सवाब मिल जाएगा। इस महीने के पहले दस दिन में रहमत और दूसरे दस दिन में मग़फ़िरत और तीसरी दहाई में दोज़ख से आज़ादी दी जाती है।

अगर कोई शख्स इस महीने में अपने मातहतों से काम लेने में नरमी करता है तो अल्लाह तआला उसके आक़ा को दोजख से आज़ाद करा देता है। ऐ लोगो ! चार वातों का इस महीने में बहुत खयाल रखा करो—दो बातें तो यह हैं जिनकी वजह से तुम अपने रब को राज़ी कर लोगे और दो बातें ऐसी हैं कि जो तुमको ज़रूर ही करनी चाहिएं जिनके बग़ैर तुमको चारा नहीं।

पहली दो बातें जिनसे ख़ुदा-ए-तआला को राज़ी कर सकोगे उनमें से एक तो इस्तग़फ़ार है और दूसरी कलम-ए-तौहीद की शहादत है और जो बातें तुम्हारे लिए ज़रूरी हैं वह ख़ुदा से जन्नत तलब करना और दोज़ख से पनाह मांगना है जब तक यह दोनों बातें हासिल न हो जायें, एक मुसलमान को इत्मीनान नहीं हो सकता।

(१४ मार्च १६२५ ई०)

रह्मतुल्-लिल्-आलमीन

तारीख में एक ज़माना ऐसा भी गुज़र चुका है जब वहशत और बरबरियत की तारीकियां हर तरफ़ छायी हुई थीं और इन्सानियत और आदमियत का नाम दुनिया से ख़त्म हो चुका था। रूम और ईरान, यूनान व मिस्र, हिन्दुस्तान और चीन यकसां तौर पर कुफ़्र की ज़लालत में घिरे हुए थे। रूम और यूनान का फ़ल्सफ़ा ख़ाक में मिल चुका था, ईरान और मिस्र का आचार-व्यवहार तबाह हो चुका था। हिन्दुस्तान और चीन की तहज़ीब एक क़िस्सा बन चुकी थी। लोग अपने पैदा करने वाले को भूल गये थे। मसीहियों ने हज़रत ईसा अलै० की तालीमात को विकृत कर दिया था। यहूदियों ने अल्लाह तआला को छोड़कर देवताओं की पूजा शुरू कर दी थी। ज़रदश्तियों ने एक ख़ुदा के दो ख़ुदा बना लिए थे। ग़रज़ तमाम रूए ज़मीन पर कोई एक जगह भी ऐसी न थी जहां ख़ुदा-ए-वाहिद की इबादत करने वाले मौजूद हों, हर तरफ़ फ़साद फैला हुआ था। हर तरफ़ जंग व वाद-विवाद का बाज़ार गर्म था, दुनिया अमन से महरूम हो गयी थी। ताक़तवरों ने कमज़ोरों को दबा लिया था। इन्सानों की आबादियां आक़ाओं और ग़ुलामों में तक़्सीम कर दी गयी थी।

ज़िन्दगी का निज़ाम बरहम-दरहम हो चुका था और समझ में नहीं आता था कि दुनिया किस तबाहकुन अंजाम की तरफ़ क़दम बढ़ा रही है ख़ासकर मुल्के अरब की हालत सबसे ज़्यादा ख़राब थी। दुनिया की कोई बदअख़्लाक़ी ऐसी न थी जो अरबों में मौजूद न रही हो, वह तमाम बुराइयां जो दूसरे मुल्कों में अलग-अलग पायी जाती थीं, अरब में एक जगह जमा हो गयी थीं। लड़कियों

को ज़िन्दा दफ़न कर देना, सौतेली माओं के साथ निकाह कर लेना, हसद व इन्तिक़ाम की आग को सालहासाल तक जलाए रखना और ज़रा-ज़रा-सी बातों को ख़ूंरेज़ जंगों का बहाना बना लेना गोया उनके नज़दीक कोई अहमियत न रखता था। इस एतबार से अगर हम अरब को उस ज़माने का तारीकतरीन ख़ित्ता कहें तो ग़लत न होगा।

जिन इतिहासकारों ने इस अहद की तारीख़ का बग़ौर अध्ययन किया है और क़ौमों के चढ़ाव व उतार के कारणों पर फ़ल्सफ़ियाना नज़र डाली है उनका एकमत फ़ैसला यह है कि उस वक़्त के हालात को देखते हुए कोई शख़्स एक लम्हा के लिए भी यह तसव्वुर नहीं कर सकता था कि क़ुदरत उस आलमगीर तारीकी को रोशनी से बदलने के लिए जो महान दूरअंदेश पैदा करेगी उसकी जगह अरब जैसे नाक़ाबिले सुधार मुल्क में तजवीज़ की जाएगी लेकिन क़ुदरत की मस्लहतें हमेशा इन्सानी अक़्ल से बहुत ऊंची रही हैं। फ़ल्सफ़ा की पहुंच महदूद है, इस लिए यकायक दुनिया के सामने एक ऐसा अप्रत्याशित और हैरतअंगेज़ वाक़िया पेश आया जिसने आज तक के इतिहासकारों को दांतों तले अंगुली दबाने पर मजबूर कर दिया।

जिहालत व हैवानियत की तारीकियां जब अपने इन्तिहाई नुक़्तापर पहुंच गयीं तो दोशंबा के रोज़ १२ रबीउल अव्वल को मक्का मुकर्रमा में इस आफ़ताबे रिसालत का उदय हुआ जो तमाम दुनिया के लिए शमअे हिदायत बन कर आया था, और जिस ने पूरब से लेकर पश्चिम तक और उत्तर से लेकर दक्षिण तक तमाम रूए ज़मीन को अपनी रोशनी से रोशन कर दिया। यह वही नबी बरहक़ (सल्ल०) था जिस की शहादतें तौरेत और इंजील में मौजूद थीं, जिसका वादा हज़रत मूसा अलै० से किया गया था, जिसकी दुआ हज़रत ख़लीलुल्लाह ने मांगी थी और जिसकी ख़ुशख़बरी हज़रत ईसा० अलै० को सुनायी गयी थी। दुनिया जानती

है कि जिस वक़्त हुज़ूर सरवरे कायनात अहमद मुज्तबा मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्ल० का आगमन दुनिया में हुआ उसी वक़्त से ज़माने ने करवट बदलना शुरू कर दी और चन्द साल की मुद्दत में तरक़्क़ी की वह तमाम मंज़िलें तै कर ली गयीं जिनके लिए फ़ल्सफ़ियों ने सदियां मुक़र्रर की हैं।

दुनिया की मुश्किलात में से कोई मुश्किल ऐसी न थी जो रसूले अक्रम सल्ल० की राह में आयी न हो। कुफ़्फ़ारे मक्का ने अपनी वहशत व जिहालत का पूरी तरह मज़ाहिरा किया और दुआ देने की जिस क़दर मुमकिन सूरतें थीं, वह सब इख़्तियार कीं, मुसलमानों को तरह-तरह से सताया गया, सरवेर कायनात के साथ गुस्ताख़ियां और बदसुलूकियां की गयीं लेकिन इसके जवाब में सब्र, दृढ़ता और क्षमा व सहिष्णुता से काम लिया गया, इसकी मिसाल तारीख़ें आलम में कहीं नहीं मिल सकती। नबी करीम सल्ल० ने अपने दुश्मनों को दुआएं दीं, अपने मुख़ालिफ़ों के साथ हमदर्दी की और अपने हमलावरों को सीने से लगाया। इस तरह उनके क़ल्ब जो पत्थर की मानिन्द सख़्त थे, मोम की तरह नर्म हो गए।

वही जमाअतें जो पहले ख़ून की प्यासी थीं, अपना ख़ून बहाने के लिए तैयार हो गयीं और वही सहाबा रज़ि० जो पहले जान के चाहने वाले थे, अपनी जान निछावर करने लगे।

दुनिया ने देख लिया कि अरब क़ौम का कैरेक्टर बिल्कुल बदल गया, उनकी कुंबापरवरी, उनका जज़्ब-ए-इन्तिक़ाम, उनकी आतिशे हसद और दूसरी ग़लत बातों की इस्लाह दुनिया के महान दूरअंदेश ने इस तरह कर दी गोया वह उनमें मौजूद न थी और इस तरह जब दुनिया की सबसे ज़्यादा गुमराह और ख़राब क़ौम इस्लाह के बाद एक ख़ुदापरस्त, मुहज़्ज़ब, सदाचारी और तरक़्क़ी याफ़्ता क़ौम बन गयी, तो उसके ज़रिया दुनिया के चप्पा-चप्पा में ख़ुदा-ए-वाहिद दीने बरहक़ के प्रचार-प्रसार का काम अंजाम दिया। इन्सानी

ज़िन्दगी का कोई कोना ऐसा नहीं हैं जिस पर रसूले अकरम सल्ल० ने तवज्जोह न फ़रमायी हो, और जिसके मुतअल्लिक़ अपने अक्वाल व अफ़वाल से एक ऐसा ढेर न छोड़ा हो जो इन्सान की रहनुमाई के लिए सदा काफ़ी हो सकता हो। आपकी (पाक ज़िदगी) अपने अन्दर एक बादशाह के लिए, एक हाकिम के लिए, एक जनरल के लिए, एक फ़ातेह के लिए, एक ग़रीब के लिए, एक अमीर के लिए, एक क़ानूनदां के लिए, एक शौहर के लिए, एक दोस्त के लिए, एक मुख़ालिफ़ के लिए, ग़रज़ हर हैसियत के लिए और हर मर्तबा के इन्सान के लिए यकसां हिदायत रखती है। इसी तरह हर मुल्क और शहर का बाशिंदा हर ज़माना और हर अहद में सीरते मुबारक से रोशनी हासिल करके अपनी दीनी और दुनियावी निजात के लिए सामान मुहैया कर सकता है।

हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने अपनी ज़िन्दगी में ग़रीबों, यतीमों, बेवाओं, बेकसों और लावारिसों के साथ जो सुलूक किया वह रहती दुनिया तक याद रहेगा। और इस्लाम और मुसलमानों के दुश्मनों से भी हमेशा प्रशंसा वसूल करता रहेगा। यूरोप के इतिहासकार जब इन वाक़िआत को क़लमबन्द करते हैं जिन में हुज़ूरे अनवर सल्ल० ने किसी बेवा की इमदाद की है या किसी यतीम को सहारा दिया है, या किसी हाजतमन्द की हाजत पूरी की है तो उनकी तहरीर में ख़ुद-ब-ख़ुद एक जोश पैदा हो जाता है और वह इसका एतराफ़ करते हैं कि हक़ीक़त में क़ुरआने करीम ने हज़रत मुहम्मद सल्ल० को रहमतुल्-लिल्-आलमीन का ख़िताब बिल्कुल सही दिया है। आप बेशक रहमते मुजस्सम थे। आपका क़ल्ब बेइन्तिहा रफ़ीक़ था। आपकी रहमतें आम थीं, आपके एहसानात बे-शुमार थे। आपकी सीरते मुबारका पढ़-पढ़कर आज तक हज़ारों, लाखों ग़ैर-मुस्लिमों के क़ुलूब इस्लाम की हक़्क़ानियत के क़ायल हो जाते हैं। आपकी रहमतें सिर्फ़ व्यक्तियों तक ही महदूद न थीं, आपके

एहसानात से क़ौम की गरदनें भी झुकी हुई हैं और क़ियामत तक झुकी रहेंगी। क़ैसरो किसरा की शहंशाहियत को फ़ना करने वाला सिवाय आपके और कौन था। गुलामों को गुलामी से निजात दिला कर आज़ादी की ज़िन्दगी का मज़ा सिवाय आपके और किसने चखाया। जिस वक़्त एशिया सोया हुआ था, अफ्रीका और यूरोप में वहशत व बरबरियत का दौर-दौरा था, उस वक़्त फ़ारान की चोटी से आपने वह सदा बुलन्द की जो तमाम दुनिया के लिए आज़ादी का संदेश साबित हुई। जिन लोगों ने यूरोप की तारीख़ का अध्ययन किया है वह ख़ूब अच्छी तरह जानते हैं कि अगर इस्लाम की तालीमात अफ्रीक़ा और अमरीका से होती हुई स्पेन व इटली में न पहुंचतीं और मसीही दुनिया को इस्लाम से प्रशंसा हासिल करने का मौक़ा न मिलता तो आज यूरोप के बाशिंदे अफ्रीका के वहशियों से ज़्यादा वहशी और हिन्दुस्तान के गोंडों और भीलों से ज़्यादा दुराचारी नज़र आते। तारीख़ ने बता दिया है कि दुनिया में अमन व अमान क़ायम रखने का अगर कोई तरीक़ा मुमकिन है तो सिर्फ़ यह है कि पैग़म्बरे इस्लाम की तालीमात पर अमल किया जाये। इस्लाम इन्सानी जाति के लिए सबसे बड़ी रहमत है। मुसलमानों ने जब तक रसूल करीम सल्ल० की तालीमात पर अमल किया, तमाम आलम में उनका डंका बजता रहा। और अगर वह आज भी अपने हादि-ए-बरहक़ की सीरत मुबारका को अपने लिए मशअले हिदायत बना लें, दीन और दुनिया दोनों में उनकी निजात यक़ीनी है।

(९ अगस्त १९३० ई०)

मुहम्मद रसूलुल्लाहु सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम

وَمَآ اَرْسَلْنٰكَ اِلَّا رَحْمَةً لِّلْعٰلَمِيْنَ ۝

व मा अर्सल्ना-क इल्ला रह्मतल्-लिल्-आल-मीन०

यह एक क़ुदरती अम्र है कि हर कमाल अपने ज़ुहूर के लिए और हर खूबी अपनी शुहरत के लिए और हर गुण अपनी नुमाइश के लिए बेचैन और आतुर है। गोया यह व्यापक नियम बिल्कुल सही है कि हर सिफ़्ते कमाल का ज़ाती चाह ज़ुहूर है। गाने वाले का गला और नाचने वालों के पांव की बेइख़्तियारी व बेताबी तो कहावत है लेकिन हुस्न की परदादरी से भी दुनिया वाक़िफ़ नहीं है अगरचे प्रेमियों ने इसका मतलब ग़लत समझा और हुस्न को राज़दारी के इंकिशाफ़ का ताना दे बैठे हालांकि हुस्न जैसी शरीफ़ खूबी की जानिब इस क़िस्म का ग़लत इल्ज़ाम बिल्कुल बेबुनियाद और सरासर बुहतान है। हुस्न की ज़ाती इच्छा तो अपने ही नक़ाब का चाक करना था। लोग यह समझे कि हमारी परदादरी हो गयी। इश्क़ के छुपाने वालों ने अपनी कमी हुस्न के ज़िम्मा लगा दी अगरचे भेद के छुपाने का सही तरीक़ा तो वह था कि जो अरबी के एक शायर ने कहा था— اذا لم يجد صبرا لكتمان سره فليس له شئ سوى الموت ينفع

'जब कोई आशिक़ अपने भेद को छुपा ले पर क़ादिर न हो तो फिर उसका इलाज सिवाय मौत के कुछ नहीं है।'

उन तंग नज़रों से भेद भी न छुपाया गया और मरते हुए भी मौत आयी तो अपनी बला हुस्न के सर थोप दी, हुस्न अपनी शुहरत

चाहता है, उसे इससे बहस नहीं कि इस शुहरत का असर एक गुमनाम आशिक़ पर क्या होगा। वह आशिक़ की रुसवाई से बेपरवा है। इस एक चीज पर दूसरे कमालात व गुणों का भी अन्दाजा किया जा सकता है। बाकमाल इंसानों से गुजरकर हैवान भी इस व्यापक नियक में शरीक हैं। बुलबुल की तरन्नुमरेजी और पपीहे की नग़मासंजी भी इस समस्त की सूची में हैं, अगरचे बुद्धिमत्तापूर्ण निगाहें इस विषय से बख़ूबी वाक़िफ़ हैं कि आलमे इम्कान के बसने वालों का हर कमाल नश्वर है। कोई कितना ही बड़ा साहबे कमाल क्यों न हो लेकिन उसका कमाल नाश के ऐब से पाक नहीं है फिर अगर दोषपूर्ण कमाल भी अपने ज़हूर के लिए बेताब और बेचैन है और छिपाए नहीं छिप सकता, तो हजरते हक़ जल्लो अला शानहू जो सारे कमालात के स्रोत और तमाम ख़ूबियों से युक्त हैं जिन के गुण अनादि से अनन्त तक बाक़ी रहने वाले हैं और जिन की ख़ूबियां लातादाद हैं वह क्योंकर ख़ामोश रह सकते थे। दुनिया में अब तक जो कुछ हुआ और आइन्दा जो कुछ होगा वह इन्हीं के गुणों की इच्छा और इस इच्छा का ज़हूर है चूंकि यह इच्छा ईश्वरेच्छा और इरादा के तहत में थी और जो कुछ हुआ और होगा वह सबका-सब अब तक एक व्यवस्था और हकीमे मुत्लक़ के इरादे के मातहत हुआ और आइन्दा भी जब तक चाहेगा, होता रहेगा। इस सिफ़ते ख़ालिक़यत ने हज़ारों क़िस्म की मख़्लूक़ पैदा की लेकिन उन सबमें इन्सानों को अशरफ़ुलमख़्लूक़ात का ख़िताब दिया गया। चूंकि इन्सान बेशुमार कमालात का आईना और सिफ़ाते मुतक़ाबिला का मजमूआ था उसको—

خَلَقْتُ بِيَدَيَّ

ख़लक़्-तु बियदय्य

(मैंने आदम को अपने दोनों हाथों से पैदा किया।)—के मुबारक

ख़िताब से नवाज़ा गया। मलाइका सिर्फ़ नूर से पैदा किये गये थे और बस लुत्फ़ व करम के मज़हर थे। इसी तरह जिन्नात में नारियत का असर ग़ालिब था और वह अवज्ञा करने की बातों के कारणव मज़हर थे। लेकिन इन्सान जिस तरह पंचभूतों से तरकीब दिया गया था उसी तरह उस की तरकीब में भी मल्कात मुतक़ा-बिला धरोहर किये गये थे। एक तरफ़ इज्ज़त और इताअत का ज़हूर इससे मुमकिन था और दूसरी तरफ़ इन्कार, उद्दण्डता व नाफ़र-मानी की ताक़त भी अता की गयी थी, साथ ही नेकी और गुनाह की दोनों ताक़तें भी उसके अन्दर रखी गयीं, इसी वजह से तमाम मख़्लूक़ में विशेष शान के साथ अवामर (आज्ञा) व नवाही (वे विषय जो धर्मानुसार मना हैं) से सुसज्जित भी किया गया। प्राकृति को इस के अधीन किया गया, और क़ुदरत ने इसको अपने लिए चुन लिया। अज़ल में—अलस्त रब्बकुम (क्या मैं तुम्हारा रब नहीं हूं)—के ख़िताब से मुख़ातिब फ़रमा कर बला का वादा ले लिया गया। हज़रते हक़ जल्ले शानहू के करम ने अपने बन्दों के इस हक़ को भी तस्लीम कर लिया कि हम इस वादा की याददिहानी भी करायेंगे, लेकिन अगर हमारे रसूल तुम तक पहुंचकर तुमको यह वादा याद दिलायें और तुमको हमारी हिदायत का प्राणवर्द्धक संदेश पहुंचाया जाये तो तुम उन नबियों का स्वागत करना और अगर मेरी हिदायत को क़ुबूल न किया और हमारे पैग़म्बरों की बातों को झुठलाया तो तुम हमेशा रहने वाले अज़ाब में मुब्तिला किये जाओगे और क़ियामत में तुम्हारा उज़्र भी सुनने के लायक़ और मक़्बूल न होगा—

يٰبَنِيْٓ اٰدَمَ اِمَّا يَاْتِيَنَّكُمْ مِّنِّيْ هُدًى فَمَنْ تَبِعَ هُدَايَ فَلَا
خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۝ وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَكَذَّبُوْا
بِاٰيٰتِنَآ اُولٰٓئِكَ اَصْحٰبُ النَّارِ هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ع

या-बनी आद-म अम्-मा या-तियन्नकुम मिन्नी हुदन् फ़-मन तबि-अ हुदायन् फ़-ला खौफ़ुन् अलैहिम व-ला हुम यहज़नून्० वल्-लज़ी-न क-फ़रू व कज़्ज़बू बि-आयातिना ऊला-इक अस्हाबुन्-नारिहुम् फ़ीहा खालिदून०

ऐ औलादे आदम अगर तुमको मेरी हिदायत पहुंचे (तो याद रखना) जो मेरी हिदायत की पैरवी करेगा उस पर किसी क़िस्म का डर और खौफ़ नहीं होगा और जो लोग मेरी आयात का कुफ़्र करेंगे और झुठलायेंगे तो उनको आग का अज़ाब होगा और वह इस अज़ाब में हमेशा रहेंगे।

क़ुदरत के इस एलान ने इन्सान को हर क़िस्म का ज़िम्मेदार बना दिया। अगर एक तरफ़ उसके सर पर—

وَلَقَدْ كَرَّمْنَا بَنِيْٓ اٰدَمَ

व लक़द् कर-रम्ना बनी आद-म

(हमने बनी आदम को मुअज़्ज़िज़ बनाया)—का ताज रखा गया था, और मलाइक-ए-मुक़र्रबीन के सज्दे शराफ़त व इज़्ज़त से नवाज़ा गया था तो इसी के साथ उसको अमानते इलाही का सबसे बड़ा ज़िम्मेदार भी मुक़र्रर किया गया और निहायत ही साफ़ तरीक़े से कह दिया गया कि औलादे आदम दुनिया में जाकर इस वादे को फ़रामोश न कर देना। यह तमाम शराफ़तें उसी वक़्त तक हैं जब तक तुम्हारी जानिब से पूरी वफ़ादारी का इज़हार होता रहे वरना यह तमाम नेमतें छीन ली जायेंगी और बजाय अह्सनुत्तक़वीम के असफ़लुस्साफ़िलीन के गढ़े में फेंक दिये जाओगे।

अंबिया अलै० की बास्त

एक तरफ़ क़ुदरत अपने कमाले खालिक़यत के साथ अशरफ़ुल्-मख़्लूक़ात से यह अह्द व पैमान कर रही थी और दूसरी तरफ़ अपने

वादे की पूर्ति के लिए इसी मख़्लूक़ात में से कुछ हस्तियों को नामज़द फ़रमा रही थी जिनको आइन्दा रुश्दोहिदायत (दीक्षा व मंत्र) की ख़िदमत सौंपी जाने वाली थी। इन पुनीतात्मा हस्तियों में क़ुदरत की नज़रे इन्तिख़ाब ने जिसको सबसे पहले चुना वह मुहम्मद रसूलुल्लाहु सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हस्ती और आप ही का नूर था—

اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى اٰلِ مُحَمَّدٍ

अल्लाहुम्-म सल्लि अला मुहम्मदिव्-व अला आलि मुहम्मद०

जब सृष्टि की रचना हुई उस समय सबसे पहले इसी नूर की उपस्थिति हुई और जब आदम सफ़ीउल्लाह (अलै०) से लेकर ईसा रूहुल्लाह (अलै०) तक तमाम अंबिया की फ़ेहरिस्त मुरत्तब हो चुकी तो उस अव्वल पैदाइश और आलमे कौनोमकां की सबसे बड़ी और मुकम्मल तस्वीर को ब-एतबार वजूद व ज़ुहूर आख़िरी नम्बर पर रखा गया। वाक़िफ़-काराने क़ुदरत और राज़दाराने हक़ीक़त इस नुक्ता को समझ गये और उन्होंने यह जान लिया कि यह सबसे पीछे आने वाला ही सबका मुकम्मल और सरदार है। और आख़िर एक दिन दुनिया ने देख लिया कि जो काम सभी अंबिया की प्रयत्न और कोशिश से नातमाम रहा वह इस अकेले ने सिर्फ़ पूर्ति को पहुंचा दिया बल्कि— اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ

अल्-यौ-म अक्मल्-तु ल-कुम दीन-कुम

(आज मैंने तुम्हारे दीन को कामिल कर दिया।)—का तमग़ा भी हासिल कर लिया। ज़ाहिर में निगाहों को आख़िर एक दिन अपनी ग़लती का एतराफ़ करना ही पड़ा और उन्होंने साफ़ कह दिया कि आलमे वजूद में अव्वल ख़ल्क़ का सबसे पीछे तशरीफ़ लाना उसकी इज़्ज़त और कमाले महबूबियत पर ख़त्म था, ख़ुदा-न-ख़्वास्ता इस ताख़ीर से निन्दा की बात मक़्सूद न थी—

ऐ ख़त्मे रसुल क़ुर्ब तो मालूमम शुद,
देर आमदह ई अज़ रह दूर आमद ई।

ताखीर के मजीद वजूह (अतिरिक्त कारण)

संसार के इन्सान रूहानी मर्जों में मुब्तिला थे। हर क़िस्म की बीमारियों ने उनका घेरा कर लिया था। आलमे मीसाक़ की प्रतिज्ञाओं को यह बदनसीब फ़रामोश कर चुके थे। रूहानी सुधारक एक के बाद दूसरे इलाज के लिए आते रहे लेकिन मरीज़ किसी तरह संभलने में नहीं आया। बरसों की मेहनत में किसी ने एक और किसी ने दो, किसी ने दस और बीस या सैकड़ों के ग़ुस्ले सेहत का शर्फ़ हासिल किया, और सबको जाने दो, सबसे बड़े पैग़म्बर कलीमुल्लाह (अलै०) की दवा से जिनको आराम हुआ था, उनकी भी यह हालत थी कि दरिया के पार होते ही बदपरहेज़ी के लिए तैयार हो गए। मर्ज़ की पुनरावृत्ति इन अल्फ़ाज़ में हुई—

اجعل لنا الٰها كما لهم الهة

(हमको भी ऐसे ही माबूद बना दो जैसे इस क़ौम के माबूद हैं।)

कलीमुल्लाह (अलै०) उन को अच्छा-बिच्छा छोड़कर तूर पर जाते हैं। तूर की वापसी में मामूली देरी हो जाती है और बहुत ही थोड़े अरसा में मरीज़ को दौरा पड़ जाता है और एक बदनसीब साहिर खड़ा होकर तमाम उम्मत को गुमराह कर देता है—

وَاتَّخَذَ قَوْمُ مُوْسٰى مِنْۢ بَعْدِهٖ مِنْ حُلِيِّهِمْ عِجْلًا جَسَدًا لَّهٗ خُوَارٌ

वत्-त-ख़-ज़ क़ौ-म मूसा मिम् बअ्दिही मिन् हुलि-यहिम् अज्-लन् ज-सदन् इलाहन् ख़ुसवार०

(मूसा की क़ौम ने उसके बाद एक गाय के बनाये हुए बछड़े को माबूद बना लिया।)

जब कलीमुल्लाह के मरीज़ों की यह हालत हो तो उससे दीगर अंबिया अलै० के मरीज़ों का अन्दाज़ा भी बआसानी हो सकता है

और जब किसी मरीज़ के इलाज से चिकित्सक आजिज़ आ जायें तो सबके आखिर में सबसे बड़े चिकित्सक को बुलाया जाता है, यही वजह थी कि क़ुदरत ने इस कुशल चिकित्सक को सब के बाद मुक़र्रर किया, जिस ने तेईस साल की थोड़ी मुद्दत में न सिर्फ़ मरीज़ों को सही और तन्दुरुस्त कर दिया बल्कि हर मरीज़ में दूसरी बीमारियों को चंगा और अच्छा करने की सलाहियत भी पैदा कर दी और एक ऐसे आरोग्यशाला की बुनियाद क़ायम की जो क़ियामत तक के लिए बीमारों का पोषक व ज़ामिन हो गया। अल्लाहुम-म सल्लि अला मुहम्मदिंव-व अला आलि मुहम्मद। व इन्सानों ने दुनिया में आकर उन तमाम अहद और वादे को फ़रामोश कर दिया जो आलमे अज़ल में क़समें खा-खाकर किये थे। खुदा तआला की आम दावत—

وَاللّٰهُ يَدْعُوْٓا اِلٰى دَارِ السَّلٰمِ ۔

वल्लाहु यद्ऊ इला दारिस्सलाम० (और अल्लाह तआला सलामती के घर की तरफ़ बुलाता है।)—से ऐसी बेज़ारी का इज़हार किया गोया इस दावत से उनका कोई तअल्लुक़ नहीं है। लेकिन इस बेज़ारी के बावजूद क़ुदरत ने कंजूसी नहीं की बल्कि एक के बाद दूसरे पैग़ंबरों के ज़रिए उन को दावत के मुसलसल संदेश भेजे जाते रहे। इन बद-बख़्तों ने दावत देने वाली जमाअत के साथ सख़्त बुरा बरताव किया। बुलाने वालों को पत्थर मारे, गालियां दीं और उन बेचारों के साथ निहायत ज़लील सुलूक किया। आख़िर खानदान के सबसे बड़े को भेजा गया और यह कहकर भेजा गया कि अगर उनकी दावत पर भी कोई नहीं आया तो अब मज़ीद इन्तिज़ार का दरवाज़ा बन्द कर दिया जाता है और आइंदा कोई नहीं आयेगा क्योंकि अब उनसे बड़ा कोई नहीं है। उनका सबसे पीछे आना, उनके बड़े होने की दलील है बस हज़रत मुहम्मद सल्ल० की आखिरी संदेश आपकी शान इब ज़्ज़त

की दलील है जिससें इन तमाम समस्याओं की पूर्ति का ज़ुहूर मक़सूद था। जो कार्य दूसरों से पूरे न हो सके हालांकि वह भी दृढ़-निश्चय मुर्सल थे, सैकड़ों बरस की उम्रें उन को इनायत की गयी थीं। बावजूद इन तमाम साज़ व सामान के भी वह इस कार्य को पूरा न कर सके जो सय्यदुलमुर्सलीन सल्ल० ने तेईस साल की थोड़ी-सी मुद्दत में न सिर्फ़ पूरा कर दिया बल्कि दीने हनीफ़ को ऐसी बुनियादों पर क़ायम कर दिया जो बन्दों की रहनुमाई के लिए क़यामत तक काफ़ी हैं।

भला जो आदिकाल की उत्पत्ति ही में नुबुव्वत के ताज का शर्फ़ हासिल कर चुका हो और आदम से पेशतर ही रिसालत की मुबारक उपाधि से सुशोभित कर दिया गया हो उसके मुतअल्लिक़ यह क्योंकर गुमान हो सकता है कि उसकी बास्त को आखिर करना किसी खास मसलहत के मातहत न था और सच तो यह है कि हक़ीक़त की इब्तिदा और ज़ुहूर की इन्तिहा तमाम अंबिया की हिफ़ाज़त के यही दो गोशे ज़िम्मेदार थे। गोया तमाम अंबिया व मुर्सलीन रह्मतुल्लिल-आलमीन ही के दामने तर्बियत से प्रशंसित थे। अगर आप सब से आखिर में तशरीफ़ न लाते तो इन कमालात का ज़ुहूर ही नामुमकिन था जो वक़्त की ताखीर में नुमायां हुए। तमाम अंबिया की परिपूर्णतः करने का फ़र्ज़ यही था कि वह सबके पीछे तशरीफ़ लाकर उन की तमाम कमी को पूरा कर दे जिन के पूरा करने की ज़रूरत थी। कुत्ब अहादीस की मशहूर हदीस इस उद्देश्य पर निहायत साफ़ तरीक़े से है जिसमें आपने अपनी और पहले के अंबिया की एक मिसाल इन अल्फ़ाज़ों में बयान की है—

'बेशक मेरी मिसाल और मुझ से पहले नबियों की मिसाल उस शख़्स की है जिसने एक घर बनाया और ख़ूब अच्छा और ख़ूबसूरत बनाया लेकिन एक ईंट की जगह एक कोना में छोड़ी तो लोग उसके इर्द-गिर्द घूमने लगे और ताज्जुब करने लगे और कहने लगे क्यों नहीं

यह ईंट रखी गयी तो आपने फ़रमाया कि वह ईंट मैं हूं और मैं खातिमुन्नबीयीन हूं।'

जब तक किसी मकान में एक ईंट की जगह बाक़ी है वह पूर्ण मकान नहीं है। देखने वालों की निगाहें बराबर उस ख़ाली जगह पर पड़ती हैं और वह उस नुक़्स की वजह खोजती हैं कि आख़िर यह मकान अपनी पूर्णता को क्यों नहीं पहुंचाया जाता। अगरचे तमाम ईंटें अपनी-अपनी जगह लगी हैं लेकिन बक़ौले हज़रत ईसा अलै०— वह कोने का पत्थर अभी नहीं है। वह कोने का आख़िरी पत्थर और क़स्रे नुबुव्वत की पिछली ईंट महज़ इस गर्ज़ से आख़िर में की गई कि दुनिया देख ले और यह अम्र ज़ाहिर हो जाये कि इस क़स्र की तामीर का सारा दारोमदार और इस मकान की पूर्णता और इन सब ईंटों के कमालात का आधार इसी एक ईंट और इसी एक पत्थर पर है जो आफ़ताबे अज़ल के उदय होने ही के वक़्त सूर इल्मिया में विशिष्ट हो चुका था और जो यौमे अलस्त की सुबह को बला कहने वालों का इमाम था। आलमे कायनात की बुनियाद व तामीर का पहला पत्थर ही वह पत्थर है जो इस ख़ाली कोने को पूरा करेगा और इन तमाम ईंटों की इज़्ज़त व आबरू का असली सबब होगा, इस की वास्त इस रास्ते पर आंख लगाये हुए और लाखों ईंटों के इन्तिज़ार को ख़त्म कर देगी बस जो ताखीर ज़ुहूर कमालात की असली कारण हो, उस पर शुब्हा करना हिमाक़त नहीं तो और क्या है।

अंबिया साबिक़ीन की शरायअ्

आलमे अज़ल में एतराफ़े ख़ुदावन्दी के वक़्त ही हज़रत हक़ सुब्हानूह की जानिब से मुक़र्रर किये गए अंबिया व रसूल का वादा इन अल्फ़ाज़ में किया गया था—

يٰبَنِيْٓ اٰدَمَ اِمَّا يَاْتِيَنَّكُمْ رُسُلٌ مِّنْكُمْ يَقُصُّوْنَ عَلَيْكُمْ اٰيٰتِيْ
فَمَنِ اتَّقٰى وَاَصْلَحَ فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۝
وَالَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا وَاسْتَكْبَرُوْا عَنْهَآ اُولٰۗىِٕكَ اَصْحٰبُ
النَّارِ ۚ هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ۔

या बनी आद-म इम्-म यअ्तियन्नकुम रुसुलुम्-मिन्कुम ल-फ़सव्वुन्
अलैकुम आयातिनी फ़-मनित्तक़ा व अस्ल-ह फ़-ला ख़ौफ़ुन अलैहिम
व ला हुम यह्ज़नून वल्लज़ी-न कज़्ज़बू बि-आयातिना वस्तक्बरू अन्हा
ऊला-इ-क अस्हाबुन्-नारिहुम् फ़ीहा ख़ालिदून०

ऐ औलादे आदम अगर तुम तक मेरी हिदायत का पयाम पहुंचे
तो याद रखना जो मेरी हिदायत की पैरवी करेगा उस पर किसी
क़िस्म का डर-खौफ़ न होगा और जो लोग मेरी आयतों का कुफ़्र
करेंगे और ग़लती के दरपे होंगे तो उनको आग का अज़ाब होगा
और वह इस अज़ाब में हमेशा रहेंगे।

इन्सानी ज़िन्दगी का असली मक़सद तब ही पूरा हो सकता जब
क़ुदरत इन्सान को पैदा करने के बाद भी उसकी रूहानी तर्बियत की
ज़ामिन होती। अगर इस सिफ़ात मुतक़ाबिला के परिचायक को जो
पशुओं जैसी उद्दण्डा और फ़रिश्तों जैसे गुणों का समाहार था, उसकी
हालत पर छोड़ दिया जाता और हज़रते हक़ की तरफ़ से पूरी सरप-
रस्ती न की जाती तो इन्सान अख़्लाक़ी इस्लाह से यक़ीनन महरूम
रहता और यह महरूमी दरहक़ीक़त उस सार्वकालिक नेमत से मह-
रूमी होती जिसकी ख़ुशख़बरी नीचे के अल्फ़ाज़ में दी गयी थी—

فَلَا تَعْلَمُ نَفْسٌ مَّآ اُخْفِيَ لَهُمْ مِّنْ قُرَّةِ اَعْيُنٍ ۝

फ़ला तअ्लमु नफ़्सुम्-मा उख़्फ़ि-य लहुम-मिन तुर्-रहिल-ऐन०

उस आंखों की ठंडक को कोई नहीं जानता जो हमने नेक बन्दों
के लिए पोशीदा कर रखी हैं।

जिस ख़ुदा ने इन्सानी तबीयत और उस के अंगों में संतुलन का लिहाज़ रखते हुए सूरते जिस्मिया को तरकीब दिया था, सच तो यों है कि उसी ख़ालिक़ व मालिक ने रूहानी तबियत का भी पूरा-पूरा इन्तिज़ाम किया।

फिर एक न दो बल्कि हज़ारों और लाखों अंबिया मुक़र्रबीन व मुस्लिहीन (सुधारक) को सिर्फ़ इसलिए नियुक्त किया कि वह गुमशुद-गाने राहे हिदायत और आशिक़ाने ज़ाते सम्दियत व तलबगाराने हयाते अब्दियत की सही रहनुमाई करें। अपने-अपने ज़माने में हर नबी हयाते तय्यबा का एक पूरा मुजस्समा और बेहतरीन नमूना बन कर आया और ख़ुदा के गुमराह बन्दों को पुकार कर कहा—

إِنِّي لَكُمْ رَسُولٌ أَمِينٌ فَاتَّقُوا اللَّهَ وَأَطِيعُونِ ۝

इन्नी लकुम् रसूलुन् अमीनुन् फ़त्तक़ुल्लाह व अतीऊन०

मैं रसूल अमीन हूं, पस ख़ुदा से डरो और मेरी इताअत करो।

ऐ लोगो! ख़ुदा ने मुझे इन अख़्लाक़ व गुणों पर पैदा किया है जो ख़ुदाए क़ुद्दूस के पसन्दीदा हैं। मेरे ख़ुदा ने मुझे सिर्फ़ इसलिए नियुक्त किया है कि मैं तुम को सुवहे अज़ल की गुफ़्तगू याद दिलाकर तुम्हें तुम्हारे वादों का पावन्द बनाऊं। देखो तुम्हारा ईश्वर और स्रष्टा एक ही है, तुम्हारी आमद व रफ़्त निज़ामे क़ुदरत के मातहत है। तुम चन्द दिन के लिए इस आलम में भेजे गए हो ताकि इस अम्र को ज़ाहिर कर दिया जाए कि तुम भौतिक ज़िंदगी में मुब्तिला होकर कहां तक अपनी हक़ीक़त से आशना रहते हो। शायद ही कोई अहद और ज़माना बल्कि कोई सदी और साल ऐसा होगा जिसमें ये ख़ुदा के पुनीत बन्दे इस आलम में तशरीफ़ न लाये हों और ख़ुदा का पैग़ाम उसके बन्दों को न पहुंचाया हो। अगरचे वक़्ती एतबार से उन की शरओं में आपसी क़दरे तफ़ावुत भी होता था। लेकिन उसूल के एतबार से यह सब के सब हल्लाती भाई थे और इन सब का

एक ही काम था। हर नबी रूहानी इस्लाह की ग़रज़ से आता था और अपने फ़रायज़ को पूरी क़ुव्वत और मुस्तैदी के साथ पूरा करके रुख़सत हो जाता था। ख़ुशनसीब रूहें अपनी गोदियां ईमान की लाज़वाल दौलत व बरकत से पुर कर लेती थीं लेकिन महरूम लोग हमेशा हंसी व मज़ाक़ और बुराई में मुब्तिला रहते थे और आख़िर उस नाकामी की मौत मर जाते थे जो एक इन्सान के लिए सख़्त ज़िल्लत व रुसवाई की मौत है।

يٰحَسْرَةً عَلَى الْعِبَادِ مَا يَأْتِيْهِمْ مِنْ رَّسُوْلٍ اِلَّا كَانُوْا بِهٖ يَسْتَهْزِءُوْنَ

या हस्रतन अलल्-इबादि मा यअ्तीहिम मिर्रसूलिन्-इल्ला कानू बिही यस्तह्ज़-ऊन०

बन्दों पर अफ़सोस है जब कोई नबी उनके पास आया तो उन्होंने उसका मज़ाक उड़ाया।

बारी इज़्ज़ इस्महू की ख़ुदावन्दे आलिया का यह कितना बड़ा एहसान है कि उसने इन्सानी हिदायत के तमाम ज़रिए इन्सान के लिए मुहैया करा दिए। लेकिन ऐ बदक़िस्मत इन्सान! तूने अवज्ञा व सरकशी के मुक़ाबला में किसी एक एहसान की भी क़दर न की, तूने ख़ुदा के पुनीत पैग़म्बरों की आवाज़ को अपनी क्षणिक क़ुव्वत और जाहिलाना हरकतों से दबाने की कोशिश की तो हक़ के मुक़ाबले में झूठ की फ़ौज लेकर तू खड़ा हुआ। तूने ख़ुदा के मासूम बन्दों को हर क़िस्म की तकलीफ़ें दी और अफ़सोस तो इसका है कि तूने इन तमाम ज़लील और कमीना हरकतों को अपनी बहुत बड़ी कामियाबी समझा। तूने इन पुनीत हस्तियों में से बाज़ को क़त्ल कर डाला और बाज़ को ज़ख़्मी कर दिया। बहुतों को गालियां देकर सरे-बाज़ार ज़लील किया और इन फ़रिश्तासिफ़त इन्सानों के हक़ में तूने हर क़िस्म की बुराई को जायज़ और श्रेष्ठ रखा।

ऐ ग़द्दार इन्सान! क्या ख़ालिक़ व मालिक के एहसानात का यही हक़ था जो तूने अदा किया। क्या तेरे हाथ की बनायी हुयी तस्वीरें और पत्थर के मुजस्समे और तेरी नाक़िस अक़्ल के मुख़्तलिफ़ बनाए क़ानून और तेरी मौहूम जिन्दगी—ये तमाम चीजें इस क़ाबिल थीं कि इन पर ख़ुदा की पाक तालीम और ख़ुदा के उपास्कों की सही और मासूम जिन्दगी क़ुरबान कर दी जाती, क्या इन मासूम मुर्सलीन की आबरू इसी लायक़ थी कि तेरी ख़ानासाज सिनअत पर इनको क़ुर्बान कर दिया जाता, अल्लाह, अल्लाह, तेरी हिम्मत और ख़ुदा की रहमत। उफ़ रे काफ़िर ! उफ़ रे नाफ़रमान—

قُتِلَ الْإِنسَانُ مَا أَكْفَرَهُ

क़ुतिलल्-इन्सानु मा अक्फ़र-हू ०
मारा जाए इन्सान क्या ही नाफ़रमान है।

ख़ातिमुल-मुर्सलीन की बास्त (अवतरण)

इस सिसिल-ए-अंबिया को हज़रते हक़ जल्ल शानहू ने एक ऐसी मुक़द्दस हस्ती पर ख़त्म किया जिसके बाद न इस क़ानून के समान किसी क़ानून की ज़रूरत है और न इस जैसे किसी नबी के अवतरण की ज़रूरत है। जब आलमे कौन का ज़ुहूर ही इरादे और क़ुदरत के मातहत था तो अज़ल में उसकी उम्र भी महदूद कर दी गयी थी। जब कायनात की बुनियाद ही फ़ना पर क़ायम है तो एक दिन उसको ज़रूर फ़ना होना है फिर जिस के लिए यह सभा फ़ज़ाई गई थी उस सदरों के सदर की आमद भी ज़रूरी थी। इधर दुनिया जब अपनी भौतिक तरक़्क़ी की मंज़िलें पूरी करने वाली थी, क़ुदरत ने ठीक इसी दौर की इब्तिदा में जब कि भौतिकता की इन्तिहा होने वाली थी, इस इन्तिहाई रूहानियत को नियुक्त किया। अगर भौतिक बिजली और भाप के खेल खेलने को तैयार थी और इस तरह आहिस्ता-आहिस्ता तरक़्क़ी के दौर को पूरा करके फ़ना के क़रीब होने वाली

थी, तो रूहानियत की पूर्णता भी लाज़मी थी बल्कि ख़ुदा की हुज्जत दुनिया के बसने वाले इन्सानों पर पूरी हो जाए और कल किसी अक़्ल वाले को यह कहने का मौक़ा न रहे कि—

اِنْ كُنَّا عَنْ هٰذَا غَافِلِيْنَ

इन कुन्ना अन् हाज़ा ग़ाफ़िलीन ०

हम तो इससे ग़ाफ़िल और बेराह थे।

जब ख़ुदा की छिपी हुई भौतिक ताक़तें ज़ुहूर में आने वाली थीं तो कोई वजह न थी कि क़ुदरत की वह रूहानी ताक़त जो अज़ल ही से उसकी नज़रे इन्तिख़ाब में छिपी हुई थी, ज़ाहिर न होती। इधर यूरोप ने भौतिकता में क़दम बढ़ाया उधर दुनिया में एक बे-सरोसामान क़ुव्वत का ज़ुहूर हुआ, जिसने बतहा की कंकरियों पर फ़ारान की वादियों में एक रेतीली ज़मीन पर बिना किसी सामान और ज़रिए के वह मुकम्मल क़ानून संपादित किए जिससे यूरोप के मुल्हिदों और दहरियों की गर्दनें झुक गयीं। भौतिकतावादी यूरोप ने आख़िर आजिज़ आकर क़ानूने मुहम्मदी (सल्ल०) के आगे अपने हथियार डाल दिए, हार का एतराफ़ कर लिया। लार्ड मैकाले की ताज़ीरात ने हज़ारों तर्मीमें क़ुबूल कर लीं लेकिन हिजाज़ का रेगिस्तानी और तेरह सौ बरस का क़ानून आज भी ऐसा मुकम्मल है कि गोया आज ही बना है।

अल्लाहुम-म सल्लि अ़ला मुहम्मदिंव-व अ़ला आलि मुहम्मद०

आज यूरोप हवा में उड़ रहा है। भाप और बिजली की आरज़ी ताक़त के भरोसे पर फ़िरऔन व नमरूद की तरह ख़ुदाई दावे में मश्ग़ूल है लेकिन हिजाज़ मौजूदा तहज़ीब से बिल्कुल अपरिचित है, वहां के नागरिक अभी तक मोटर को जादू की गाड़ी और टेलीफ़ोन को अश्शैतान यतकल्लुम फ़ीह (इसमें शैतान बोलता है)—कह रहे हैं। भला तेरह सौ बरस पहले यह ज़मीन का हिस्सा तहज़ीब व आचार से किस क़दर नाआशना रहा होगा—उस ज़मीन की ख़राब तहज़ीब का तसव्वुर करो और फिर बीवी आमिना के यतीम बच्चे का

क़ानून सामने रखकर इन्साफ़ से काम लो और साधक के अभाव और उसकी ज़रूरत को ध्यान में रखते हुए ख़ुदारा इन्साफ़ करो। क्या यह एक इन्सानी अक़्ल का करिश्मा है, क्या कोई इन्सान ऐसा मुकम्मल क़ानून दुनिया की तहज़ीब से अपरिचित होकर बना सकता है। आज यूरोप की भौतिकता मसीहियत को ख़त्म कर चुकी है, हिन्दू धर्म टुकड़े-टुकड़े हो चुका है लेकिन इस सैलाब के ज़माने में सिर्फ़ एक इस्लाम है जो यूरोप की भौतिकता का पूरा मुक़ाबला कर रहा है और मैं कह सकता हूं कि इस सैलाब की दहरियतनवाज़ मौजों की बाढ़ इस्लाम की एक ईंट भी नहीं हिला सकती—क्या इससे बढ़ कर इस्लाम की सच्चाई के लिए कोई दलील हो सकती है। ईसाई मसीहियत से और हिन्दू वैदिक धर्म से तंग आ चुके हैं लेकिन मुसलमान आज फिर अज़सरे नौ तब्लीग़ी मज़हब के प्रचार के लिए सर पर कफ़न बांधे नज़र आते हैं और मैं साफ़ तौर पर अर्ज़ कर देना चाहता हूं कि इस बीसवीं सदी में हर सोसाइटी के मज़हब का ज़िन्दा रहना मुश्किल है। हर क़िस्म के नए व पुराने मज़हब बाज़ार की मंडी में आ चुके हैं, अब दुनिया देख लेगी कि कौन-सा माल ज़्यादा फ़रोख़्त होता है।

कुफ़्र व इल्हाद के प्रेमियों ! तुम कब तक दुनिया को धोखे में रख सकते हो, तुम अपने नफ़्स को ख़ुद तो धोखा दे सकते हो लेकिन दुनिया के करोड़ों इन्सानों को हमेशा धोखा नहीं दे सकते। आज से तेरह सौ बरस पहले ख़ुदा के एक पुनीत और पाक बन्दे ने हिजाज़ की पाक ज़मीन में एक छोटी-सी पहाड़ी की चोटी पर जो सदा बुलंद की थी वह आज हर एक शहर और हिस्से में गूंज रही है। वह आवाज़ कोई नई आवाज़ न थी बल्कि वह दीने इलाही का वह संदेश था जो हर ज़माने में ख़ुदा के पाक नबी ख़ुदा के बन्दों को पहुंचाते रहे हैं। अब से बहुत पहले कलीम (अलै०) और ख़लील (अलै०) भी इसी पैग़ाम के पैग़म्बर बन चुके थे। आज तक हज़ारों, लाखों

नबी नियुक्त हो चुके हैं। जब तक दुनिया के इन्सान इब्तिदा की मंज़िलों में थे तो उनके लिए क़ानूने इलाही भी मुख़्तसर और सादा था लेकिन जब दुनिया एक आख़िरी करवट लेने वाली थी और तरक़्क़ी का आख़िरी मंज़र अपनी इन्तिहाई मुश्किल में पेश होने वाला था तो उस ज़माने की हिदायत के लिए भी ऐसे ही इन्सान की ज़रूरत थी जो दुनिया के सामने इन्सानी ज़िन्दगी का ऐसा बेहतरीन नमूना पेश करे जिससे दुनिया आज तक अपरिचित थी। क़ुदरत ने उसी दिन के लिए इस बेशक़ीमती गौहर को छिपा रखा था। इधर भौतिकवादियों ने बिल्कुल नयी और अछूती मालूमात का भंडार पहुंचाया और उधर दुनिया के मालिक ने रूहानियत की एक ऐसी अनोखी तस्वीर पेश की जिसको देखकर नई ईजाद करने वालों की अक़्लें हैरत में पड़ गयीं।

उसकी अमानत, सत्य-निष्ठा रूहानियत व दानशीलता और इसी क़िस्म की हज़ारों बातों ने मक्का के काफ़िरों को हैरत में कर दिया था बल्कि अमरीका व लन्दन के काफ़िर, पेरिस व जापान के गंदे लोग और हिन्द के मूर्ति-पूजक भी आज उसी तरह ताज्जुब में हैं जिस तरह किसी ज़माने में अबू जहल, अबू लहब और वलीद बिन मुग़ीरा जैसे सरकश व काफ़िर हैरत में थे। क़ौमपरस्ती के मर्दूद जज़्बा से हटकर अगर देखा जाए तो आज कौन-सा दिल है जो कमालाते मुहम्मदिया सल्ल० का एतराफ़ नहीं करता है। दुनिया में वह एक ही इन्सान था जिस को क़ुदरत ने अपने अभिन्न गुणों का पूर्ण आईना बना कर भेजा था। उसकी तालीम अगर एक तरफ़ हुक़ूक़ुल्लाह की ज़ामिन थी तो दूसरी तरफ़ उसी चमक-दमक के साथ हुक़ूक़ुलइबाद की भी पोषक और प्रतिभू थी। उसका दीन न तो ख़ास सन्यासी था और न महज़ भौतिकता का हामी बल्कि वह जो कुछ दुनिया के सामने पेश करने को लाया, वह दीन-दुनिया का संग्रह था। वह ख़ुद हयाते तय्यबा का एक मुजस्समा और मुकम्मल नमूना था। फिर उस

ने व.स्त के बाद जो तालीम दुनिया के सामने पेश की वह ऐसी कामिल और पाक तालीम थी जिस पर अमल करने से ही एक इन्सान सही इन्सान कहलाने का हक़दार हो सकता है। क्या दुनिया ने खुदा के उस पाक और पुनीत इन्सान की ज़िन्दगी का अब तक अध्ययन नहीं किया। आज मुहम्मद रसूल सल्ल० की पाक सीरत घर-घर पहुंच चुकी है। शायद ही आज तक किसी दूसरे इन्सान की ज़िन्दगी और जीवन-चरित्र इतना आम हुआ हो जिस क़दर कि अब तक सैयदुलमुर्सलीन सल्ल० की ज़िन्दगी हर इन्सान के सामने पेश हो चुकी है। इस पाक पैग़म्बर की ज़िन्दगी के लिए भविष्यवाणियां भी काफ़ी हैं, तमाम पिछले अंबिया अपनी उम्मतों को इसकी खूबियां व गुण सुनाते रहे हैं—पिछली किताबों को पढ़ने से ऐसी निशानियां मिलती हैं जब कि उन किताबों में काफ़ी तब्दीली हो गई है। इतनी विस्तृत ज़िन्दगी के लिए यह यहां चन्द पृष्ठ क्या माने रखते हैं लेकिन वह मुश्क है कि उसको जितना उलट-पुलट करो ज़्यादा खुश्बू देती है।

हुज़ूर सल्ल० की ज़िन्दगी के वाक़िआत को बार-बार ज़िक्र करना ऐसा है जैसे कोई मुश्क बार-बार हिलाये जितनी मर्तबा कोई मुश्क को हरकत देगा उतनी ही खुश्बू ज़्यादा होगी। पाठकगण एक दफ़ा रूहे मुहम्मद रसूल० पर दरूदख्वानी कर लें तो मैं एक बहुत ही मुख्तसर खाका पेश करने की इज़्ज़त हासिल कर लूं। अल्ला हुम-म सल्लि अला मुहम्मदिंव-व अला आलि मुहम्मद।

नहीं कहा मैंने मुहम्मद सल्ल० की प्रशंसा में कोई बात लेकिन मेरी बात की प्रशंसा हो गई मुहम्मद के नाम से।

महंबा सल्लि अला हस्तम सनाख्वाने रसूल
सद सलामे मन बजिस्मे पाक व बरजाने रसूल।

महंबा सल्लि अला कि मैं भी रसूल सल्ल० की प्रशंसा करने

वालों में हूं, मेरी जानिब से रसूले पाक, उन के जिस्मे पाक और उनकी जान पर सैकड़ों सलाम हों।

ऐ सबा दे पैक मुश्ताक़ान बदरगाहे नबी
गो सलामे दस्त बस्ता पेश ऐवाने रसूल

ऐ सबा तू अभिलाषियों का संदेश दे नबी की दरगाह में और यह सलाम दस्तबस्ता रसूल के महल के सामने।

देखना वह छोटा-सा बच्चा एक छोटा-सा स्याह अमामा बांधे एक लम्बा-सा कुर्ता पहने एक छोटी-सी क़मची लिए हुए हलीमा की बकरियां चरा रहा है। यही वह बच्चा है जिसको अज़ल में सबसे पहले न सिर्फ़ अव्वल रचना का मंसबे जलीला अता हुआ था बल्कि वह नुबुव्वत की इज़्ज़त से पैदा होते ही नवाज़ा जा चुका था। जब कोई न था तन्हा ख़ालिक़ की यह तन्हा मख़्लूक़ अकेली ही सुब्बूहुन क़ुद्दूस का वज़ीफ़ा पढ़ रही थी तो ख़ुदा उसे इमामुलअव्वलीन व आख़िरीन के ख़िताब का मुख़ातिब बना चुका था। यह बकरियों का चरवाहा नहीं दुनिया के बेशुमार इन्सानों का रखवाला आज हलीमा के जंगल में इस शान से फिर रहा है, लेकिन दूसरे दिन यही पुनीत इन्सान शाम के बाज़ारों में मक्का की एक शरीफ़ ख़ातून का वकील बनकर तिजारत कर रहा है न मालूम इस उम्मी (अपढ़) और बकरियां चराने वाले को यह बेहतरीन तिजारत का तरीक़ा किसने सिखा दिया है। मक्का में कोई तिजारत का स्कूल भी नहीं है और क़बीला सूर के रहने वाले तो सही गिनती भी नहीं गिन सकते। फिर इस नौजवान ने यह तिजारत का ढंग कहां सीखा। कोई है जो इस मुअम्मे को हल करे?

तिजारत को अभी चन्द ही दिन गुज़रे थे कि ग़ारे हिरा में इबादत का सिलसिला शुरू हो गया। एक ग़ार में एकान्तवासिता और फिर वह भी लगातार कई-कई महीने, एक इन्सानी समझ तो

इस भेद के समझने से यक़ीनन असमर्थ है। एकान्तवासिता एक दिन नामूसे अक्बर (जिब्रील) की मुलाक़ात का ज़रिया बन गयी और वर्क़ा बिन नोफ़िल के इन अल्फ़ाज़ ने वह सब कुछ ज़ाहिर कर दिया जो अभी तक छिपा था। वर्क़ा ने नुबुव्वत के मुतअल्लिक़ तो जो कुछ कहा वह कहा लेकिन एक ऐसी बात भी कह दी जिसका गुमान भी न था—

'काश मैं उस वक़्त जिन्दा होता जब तेरी क़ौम तुझ को मक्का से निकालेगी।' ياليتني اكون حيا حين يخرجك قومك۔

यह सुनकर हुज़ूर सल्ल० ने ताज्जुब से पूछा, क्या मेरी क़ौम मुझको जलावतन भी करेगी, लेकिन वर्क़ा ने बड़े इत्मीनान से कहा—

'कोई बात नहीं है जो सबके साथ हुआ है वह तुम्हारे साथ भी होगा।'

देखने वालो! ज़रा देखना वह जब्ले अबू क़ैस की चोटी पर ख़ुदा का महान धर्मप्रचारक एक कम्बल का कुर्ता पहने, अमामा बांधे क्या कह रहा है। यह यकायक हाज़िरीन ने गालियां क्यों देनी शुरू कर दीं। उस पर पत्थरों की बारिश क्यों करने लगे। आख़िर उसने किसी को क्या कह दिया।

सुबह के सुहाने वक़्त में जबकि लोग मीठी नींद में ठण्डी हवा के मज़े लूट रहे हैं उम्मत का यह हादी मक्का की गलियों में—'कह दो ऐ लोगो! नहीं है कोई ख़ुदा मगर अल्लाह, और बचाओ तुम अपने नफ़्सों को और अहलो अयाल को आग से—की सदाएं लगा रहा है। लोग रात को सिरहाने पत्थर रखकर सोए हैं ताकि सुबह को उनके पाक पांव को ज़ख्मी कर दें जो रात भर ख़ुदा की इबादत में अपने मौला के सामने—'रात के कुछ हिस्से में तहज्जुद की नमाज़ पढ़ो तुम'—के हुक्म की तामील के लिए खड़े रहे हैं।

ख़ुदा का यही महान धर्मप्रचारक जंगे बदर में एक बेहतरीन जरनैल और जंगी लाट के फ़रायज़ अंजाम दे रहा है और इस ख़ूबी से फ़ौजों को तर्बियत दी है कि तीन सौ तेरह की थोड़ी-सी तादाद ने

एक हज़ार मुसल्लह फ़ौज को हरा दिया है। क्या मदीना में कोई जंग सिखाने का कालिज था अगर नहीं था तो यह जंग का तरीक़ा आख़िर किसकी तालीम का नतीजा था जिसके एक-एक लफ़्ज़ से बहादुरी के दरिया उमड़ रहे हैं—

'क़सम उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है अगर कोई मेरे साथ न चला तो मैं तन्हा कुफ़्फ़ार से लड़ने जाऊंगा।'

इस बहादुरी भरे लेक्चर ने सुनने वालों पर जो असर किया उस की बात ज़लील हुए कुफ़्फ़ारों से पूछो जो मैदान में आने से पहले ही भाग गए और ख़ुदा तआला मुसलमानों को कामियाब और सही-सालम वापस लाया—

मुसलमान अल्लाह तआला की नेमतें और उसकी रज़ामन्दी ले कर लौटे और उनको कोई नुक़सान नहीं पहुंचा।

ग़िज़वए अहज़ाब में उम्मीलक़ब पैग़म्बर की सियासतदानी का यह अदना करिश्मा था कि कुफ़्फ़ार के लश्कर में फूट पड़ गई और सुबह से पहले ही वे सब भाग गए। हलीमा के घर में बकरियां चराना शाम में तिजारत करना, ग़ारे हिरा में ख़ामोश इबादत बजा लाना, फ़ारान की चोटी और मक्का की गलियों में धर्म-प्रचार करना, मैदाने जंग में एक सिपहसालार होना, मस्जिद की मेहराब में नमाज़ियों का इमाम बनना और मिंबर पर बेहतरीन लेक्चरर के फ़र्ज़ अंजाम देना, और मस्जिद की सेहन में क़ाज़ी और जज बनकर फ़ैसले करना फिर बीवी आयशा रज़ि० के हुजरा में रात को इतनी इबादत करना कि क़दमे मुबारक सूजकर फट जायें—यहां तक कि आपके दोनों पांव सूज जाते। ग़र्ज़ कि ऐसी ज़िन्दगी जिसमें हर चीज़ कमाल पर है।

इन तमाम ख़ूबियों के बावजूद बेहतरीन क़ानूनदां जिसके आगे दुनिया के क़ानूनदां अपनी कमतरी का एतराफ़ कर चुके हों। फिर लुत्फ़ यह है कि उम्मी हैं, बे-पढ़े-लिखे हैं। तख़्ती, क़लम व दवात की सूरत भी नहीं देखी। स्लेट, पेंसिल कभी नज़र से नहीं गुज़री। किसी

उस्ताद को शागिर्दी का फ़ख़्र भी हासिल नहीं हुआ। इन तमाम तरक़्क़ी के कारणों के अभाव के बावजूद भी सब कुछ हैं और ऐसे हैं कि तमाम दुनिया के इन्सानों को मिलाकर वज़न किया जाए तो सब पर भारी हैं—

'हमारा लिखने वाला (हम पर मुक़र्रर करने वाला) ऐसा शख़्स है जो न मदरसा में गया और न उसने ख़त लिखना सीखा और मसलों के घेरे में पड़ गया और अव्वल मुदर्रिस हुआ।'

وَعَلَّمَكَ مَا لَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ وَكَانَ فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكَ عَظِيْمًا ـ

व अल्लम्-क मा-लम तकुन् तअ्लम् व का-न फ़ज़्लुल्लाहि अलै-क अज़ीमा। ०

ऐ मुहम्मद ! हमने आप को सिखाया और पढ़े-लिखे बिल्कुल न थे और ख़ुदा तआला का फ़ज़्ल व करम आप पर बहुत बड़ा है।

आखिर यह सब कुछ कहां सीखा। किसने सिखाया, दुनिया की तहज़ीब से कोसों दूर बैठकर क़ियामत तक के लिए क़ानून किसकी तालीम से बनाया। कुफ़्र व नास्तिकता के ग़ुलामो ! बोलो, आखिर आज दुनिया की ज़ुबानें क्यों गूंगी हैं। उसके क़ुरआन और क़ानून का, उसकी पाक तालीम और रूहानियत व अख़्लाक़ का अगर जवाब रखते हो तो पेश करो। चौदह सौ बरस में अभी बेमिसाल की मिसाल और उस बेनज़ीर की नज़ीर तुम्हारी नज़रें तलाश करने से असमर्थ हैं। तुम ने ज़मीन का कोना-कोना छान मारा है। आसमान पर भी मीलों उड़ चुके हो, ज़ुहरा और मिर्रीख़ से ख़त व किताबत का फ़ख़्र रखते हो, चांद की दुनिया में भी कूद गए हो—यह सब कुछ कर चुके लेकिन आज तक एक इन्सान का जवाब न आ सका। अगर इस तरक़्क़ी के दौर में तुमको इस जैसा इन्सान नहीं मिला तो उसकी रहमत का सदक़ा है कि तुम ज़मीन पर चलते हो और हवा में उड़ते हो। उसी का सदक़ा है कि तुमको ठंडा पानी और

गर्म रोटी मिल रही है, वह न होता तो कुछ भी न होता या वह होता लेकिन संसार वालों के लिए रहमत न होता तो दुनिया के किसी काफ़िर को भी इत्मीनान मयस्सर न होता। खुदा की क़सम तुमने तो अभी यह भी नहीं समझा कि वह क्या था—

'मसलहत नहीं है कि राज़ परदा से बाहर आए वरना रिन्दों की महफ़िल में कोई काम ऐसा नहीं है कि जो न होता हो।'

व सल्लल्लाहि तआला अला ख़ैरि ख़ल्क़िही मुहम्मदिव-व आलिही व अस्हाबिही अजमईन०

(१ जुलाई १९२७ ई०)

रसूलुल्लाहु सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुख़्तसर हालात

हर हादी और दुनिया के हर पैग़म्बर के लिए यह ज़रूरी है कि वह अपने मज़हब का प्रचार शुरू करे तो यह सोच ले कि जो लोग मेरे महज़ब को क़ुबूल करेंगे उन की हिफ़ाज़त का इन्तिज़ाम क्या होगा। यह वह चीज़ है जो अपनी ज़िन्दगी में हर पैग़म्बर को पेश आती रही और इस ख़तरे से कोई पैग़म्बर भी महफ़ूज़ नहीं रहा और न कोई ऐसा शख़्स महफ़ूज़ रह सकता है जो किसी नये मज़हब और नये ख़यालात का मूजिद और उन का प्रचारक हो, आज भी आप कोई तहरीक शुरू करके देख लीजिए। ज़ाहिर है कि तमाम दुनिया तो आपकी किसी तहरीक से भी इत्तिफ़ाक़ नहीं कर सकती, लेकिन कुछ लोग यक़ीनन आपकी तहरीक का स्वागत करते हुए उसे क़ुबूल करेंगे। क़ुबूल करने वालों के मुक़ाबला में एक जमाअत आपकी और आपके हमख़याल लोगों की मुख़ालिफ़ भी होगी। मुख़ालिफ़ यक़ीनन आपकी जमाअत को मिटाने की कोशिश करेंगे उस वक़्त आपका यह अख़्लाक़ी फ़र्ज़ होगा कि आप अपनी जमाअत को दुश्मनों से महफ़ूज़ रखने की हर तदबीर इख़्तियार करें। यही हालत हर एक ज़माने में अंबिया अलै० को पेश आती रही है। दुनिया उनके साथ चलने वालों को हर क़िस्म की तकलीफ़ पहुंचाने के लिए आमादा रही और वह बेचारे मजबूर होकर अपनी मुट्ठी भर जमाअत को उन ज़ालिमों से बचाने की तदाबीर इख़्तियार करते रहे।

अंबिया का पहला वअ्ज़

सिलसिला-ए-नुबूवत के तमाम बुज़ुर्गों पर नज़र डालिए तो उन का पहला वाज़ यही आएगा कि वह अव्वल ख़ुदा की तौहीद पर उपदेश देते थे और उनका दूसरा वाक्य यह होता था कि मैं ख़ुदा की तरफ़ से नियुक्त होकर आया हूं, मेरी आज्ञा-पालन और फरमांबरदारी करो—

إِنِّي لَكُمْ رَسُولٌ أَمِينٌ فَاتَّقُوا اللَّهَ وَأَطِيعُونِ ۝

इन्नी लकुम् रसूलुन् अमीनुन् फ़त्तक़ुल्लाह व अतीऊन ०

मैं एक पैग़म्बर हूं और ख़ुदा की वह्य और उसके अहकाम का अमानतदार हूं, लेहज़ा ख़ुदा से डरो और मेरी पैरवी करो।

अगरचे पैरवी और आज्ञा-पालन के सिलसिले में हर पैग़म्बर ने अपनी पोजीशन को साफ करते हुए यह ज़रूर फ़रमाया कि मैं अपनी पैरवी का हुक्म किसी दुनियावी लालच या दौलत के हासिल की ग़र्ज़ से नहीं देता वल्कि मेरा सवाब तो उस ख़ुदा के ज़िम्मा है जिसने मुझको नियुक्त किया है—

وَمَا أَسْأَلُكُمْ عَلَيْهِ مِنْ أَجْرٍ إِنْ أَجْرِيَ إِلَّا عَلَىٰ رَبِّ الْعَالَمِينَ ۝

व मा अस्-अलकुम् अलैहि मिन् अज्-रानि अज्-रि-य इल्ला अला रब्बिल्-आलमीन०

और मैं तुमसे कुछ उजरत तलब नहीं करता वल्कि मेरी उजरत तो अल्लाह रब्बुल्-इज़्ज़त के ज़िम्मा है।

एक आदमी और मज़हब की दावत देने वाला का यह इतना साफ़ और सच्चा बयान है कि इसके ऊपर किसी क़िस्म की बदगुमानी की गुंजाइश ही बाक़ी नहीं रहती लेकिन जिन बदनसीबों को ख़ुदा की ज़ात व सिफ़ात में उसकी मख़्लूक़ को शरीक करने का चस्का और अपने इक़्तिदार के क़याम का मज़ा पड़ गया हो, उनके लिए दोनों बातें नाक़ाविले अमल वल्कि मौत के बराबर थीं। ख़ुदा पर ईमान लाना,

और उसकी तौहीद का क़ायल हो जाना, अपने पूर्वजों और स्वयं के जाहिलाना एतक़ाद को छोड़ देना अपनी तौहीन समझते थे। उन का दिमाग़ शिर्क की गन्दगी से इस क़दर गंदा हो चुका था कि उन की समझ में यह बात ही न ठहरती थी कि एक अकेला ख़ुदा इन्सान की बहुत-सी ज़रूरतों की पूर्ति क्यों कर हो सकता है। ख़ुदा-ए-क़ुद्दुस का ख़्याल उनके दिमाग़ों में अपने पथरीले बुतों से ज़्यादा न था, सिर्फ़ छोटे-बड़े का फ़र्क़ करते थे बाक़ी ख़ुदा को वह एक महदूद क़ुव्वत व ताक़त का मालिक समझ कर यह सोच सकते थे कि वह तन्हा हमारी मुश्किलों व ज़रूरतों के लिए किस तरह काफ़ी हो सकता है। उनके नज़दीक एक इन्सान का बदतरीन गुनाह सिर्फ़ यह था कि वह तमाम माबूदों को एक ख़ुदा में सनम कर दे। यह चीज़ इतनी ख़तरनाक थी कि वह सब कुछ करने को तैयार थे लेकिन अपने तमाम फ़रज़ी ख़ुदाओं को एक ख़ुदा में जज़्ब कर देने के लिए आमादा न थे। वह अंबिया के दर से तौहीद को सख़्त हैरत से सुनते और उस पर ताज्जुब करते थे।

'क्या तमाम ख़ुदाओं को मिलाकर एक कर दें तो यह अजीब व ग़रीब चीज़ है जिसके लिए हम हरगिज़ तैयार नहीं हैं।'

यही वजह थी कि वह अंबिया की मुख़ालिफ़त को अपना अख़्लाक़ी और मज़हबी कर्तव्य समझते थे और उस पर अमल करते थे।

इक़्तिदार का सवाल

दूसरी बात जो कुफ़्फ़ार को सबसे ज़्यादा भारी थी वह अंबिया अलै० की इताअत थी। यह चीज़ उनके लिए पहली मुसीबत से भी ज़्यादा थी। वह अपने निजी प्रभुत्व को इस क़दर ज़रूरी समझते थे कि अपने मुक़ाबले में किसी दूसरे के प्रभुत्व को सख़्त ख़तरे की

नज़र से देखते थे। उन को अन्देशा था कि कहीं पैग़म्बरों का प्रभुत्व हमारे प्रभुत्व और हमारी शख्सियत को नाश न कर दे इस लिए हर ज़माने के शख्सियत पसन्द इन्सान हर नबी की मुखालिफ़त करते और लोगों को नबी की पैरवी से दूर रखते थे। उनके सामने यह सवाल इस क़दर अहम था कि वह इस से बेदरेग़ खुदा के एक पैग़म्बर की इज्ज़त को क़ुर्बान कर देना अपने लिए फ़ख्र ख़याल करते थे। नबी और उसकी पैरवी करने वालों—दोनों को ज़लील ख़याल करते थे और बाज़ दफ़ा अपने ईमान न लाने की वजहों में उसका भी ज़िक्र किया करते थे कि भला हम ऐसे शख्स पर किस तरह ईमान ला सकते हैं जिस के ऊपर बस्ती के भ्रष्ट और कमीन लोग ईमान लाते हैं—

'कुफ़्फ़ार ने कहा हम आप पर ऐ मुहम्मद कैसे ईमान ले आयें आप पर तो मक्का या बस्ती के भ्रष्ट लोग ईमान लाते हैं। आप के अनुयायी तो कमीन लोग हैं।'

रसूले खुदा सल्ल० का ज़माना अगरचे पहले की उम्मतों के मुक़ाबले में एक रोशनख़याल ज़माना समझा जाता है। दुनिया पहले से किसी क़दर मुहज्ज़िब हो चुकी है। लेकिन कमबख्त इक्तिदार का सवाल इस ज़माने में भी मौजूद है। अबू जहल और मस्ऊद सक़फ़ी के मुक़ाबला में अब्दुल मुत्तलिब के पोते का इक़्तिदार बर्दाश्त नहीं किया जाता। इन दोनों शख्सियतों के मुक़ाबले में हज़रत मुहम्मद रसूल सल्ल० को एक नातजुर्बेकार लड़का बाताया जाता हैं और कहा जाता है कि बड़े लोगों की मौजूदगी में नुबूवत का हक़ उस को क्यों कर मिल गया। अगर खुदा को क़ुरआन नाज़िल ही करना था तो फिर मक्के और तायफ़ की इज्ज़तदार शख्सियतों को इसके लिए क्यों न चुना गया—

'क्यों नहीं नाज़िल किया गया यह क़ुरआन दो बस्तियों की अज़ीम शख्सियतों पर, बड़े लोगों पर।

बहरहाल बाप-दादा की कोरी और जाहिलाना पैरवी और अपने प्रभुत्व को बाक़ी रखना–यही दो चीजें थीं। जिन्हों ने कुफ़्फ़ार को अंबिया पर ईमान लाने से बाज रखा और वह ख़ुदा की एक पाक जात के खिलाफ़ हर क़िस्म के कष्ट देने के लिए आमाद हो गए।

मुखालिफ़त की खैर कुछ भी वजहें हों लेकिन यह वाक़िआ है कि पैग़म्बरों को हर क़िस्म की तकलीफ़ें और यातनाएं पहुंचायी गयीं। उन के अनुयायियों के जान व माल को खतरे में डाला गया और हर क़िस्म की रूहानी व जिस्मानी मुसीबतों के सामान उनके लिए मुहैया किये गये।

मुदाफ़अत (बचाव) की जरूरत

यही वजह थी कि हर जमाने के अंबिया ने अपनी क़ौम के लिए कुछ-न-कुछ मुदाफ़अत के सामान पहुंचाये हर तरीक़ा से अपनी क़ौम को दुश्मनों व अजनबियों की पहुंच से बचाने की कोशिश की यह एक ऐसी फ़ितरी चीज है कि सिर्फ़ अंबिया की जमआत पर ही खत्म नहीं है बल्कि हर वह रहबर और लीडर जो अपने ख्यालों की इशाअत करता है तो दूसरी तरफ़ उसको इसकी जरूरत है कि जो लोग उसके मिशन को क़ुबूल करें उनकी इज्जत और आबरू को भी ग़ैरों से बचाये वरना कोई मिशन भी कामियाब नहीं हो सकता। इन ही उसूल को मद्देनजर रखते हुए हजरत अंबिया कराम को भी बाज मौक़ों पर जंग की नौबत आयी है अगर दुनिया उनके मुक़द्दस खयालों को नरमी के साथ क़ुबूल कर लेती या उनके अनुयायियों को तकलीफ़ पहुंचाने, लूटने और मारने में पहल न करती तो यह जमाअत क़ियामत तक भी किसी के खिलाफ़ क़ुव्वत का इस्तेमाल न करती। इस मुख्तसर प्रस्तावना के बाद मैं यक़ीन करता हूं कि वे शुब्हे दूर हो जायेंगे जो आजकल दुश्मने इस्लाम की जानिब से इस्लाम की इस

तालीम पर किये जाते हैं जिस का तअल्लुक़ जंगी आदेशों से है।

हुज़ूर (सल्ल०) का तर्जे अमल

कौन नहीं जानता कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने पूरे तेरह साल तक नरमी और शान्ति के साथ अपने मज़हब की दावत दी और हर क़िस्म के जब्र व ज़ुल्म का मुक़ाबला इन्तिहाई सब्र व धैर्य से करते रहे लेकिन कुफ़्फ़ार के द्वेष व हसद ने जब इन्तिहाई सूरत इख़्तियार कर ली और मुसलमानों पर हर क़िस्म के अज़ाब को जायज़ समझ लिया गया और आपको और आपके साथ आपके अनुयायियों को भी हिजरत व जलावतनी पर मजबूर किया गया तो फिर हम यह पूछना चाहते हैं कि आख़िर अक़्ल व तहज़ीब का तक़ाज़ा क्या था। क्या कुफ़्फ़ार से कोई झगड़ा न किया जाता और बेरहम भेड़ियों को उनकी हालत पर छोड़ दिया जाता। यह बदबख़्त मुसलमानों का अच्छी तरह ख़ून पीते रहते और मुस्लिम क़ौम की इज़्ज़त व आबरू पर डाके डालकर उम्मते इस्लामिया का नामोनिशान मिटा देते। यही वह कारण थे जिन की बिना पर मज़लूमों की हिमायत के लिए जंग का एलान किया गया और क़ानूने जंग की शैली तर्तीब दी गयी—

أُذِنَ لِلَّذِيْنَ يُقَاتَلُوْنَ بِاَنَّهُمْ ظُلِمُوْا۔

उज़ि-न लिल्लज़ी-न युक़ातिलून बि-अन्नहुम् ज़ुलम्०

इजाज़त दे दी गयी उन लोगों को जो हिंसा कर रहे हैं इसलिए उन पर ज़ुल्म किया गया।

हुज़ूर सल्ल० का फ़ातिहाना इक़्दाम

अब तक जो कुछ अर्ज़ किया गया उसका तअल्लुक़ आक़ाए दो जहां सरवरे आलम सल्ल० की ज़िन्दगी के साथ था। लेकिन जब

कुफ़्फ़ार की पैदा की गयी अड़चनों ने आपको हिजरत के लिए मजबूर कर दिया और हिजरत के बाद भी कुफ़्फ़ार अपनी शरारत से बाज़ न आये तो हुज़ूर सल्ल० ने अपने कमज़ोर साथियों की जान और उनके माल की हिफ़ाज़त के लिए तलवार उठायी कि दुनिया हैरत में हो गयी और आज तमाम दुनिया के तलवार चलाने वालों में जो दर्जा आपको हासिल है वह किसी को नहीं।

तलवार

तलवारकशी का अगरचे सबसे बड़ा मक़सद तो यही था कि कमज़ोर मुसलमानों के जान व माल को कुफ़्फ़ार की लूट-मार से बचाया जाए। लेकिन इसके साथ यह ग़रज़ भी थी कि मज़हब की हक़्क़ानियत व सच्चाई को उन लोगों पर ज़ाहिर कर दिया जाए जिनके नज़दीक किसी मज़हब की हक़्क़ानियत के लिए सिर्फ़ एक ही दलील हो सकती है और वह यह कि इस मज़हब काअवगा बहुत-सी फ़तहों का मालिक हो और जब कोई शख़्स उसका मुक़ाबला करे तो पराजित हो कर भाग जाए। अगरचे जंग में विजयी और परास्त होने का तअल्लुक़ हक़ व झूठ से कुछ भी नहीं है लेकिन कुफ़्फ़ारे अरब की इस जहालत का क्या इलाज किया जाएं कि उन बदबख़्तों ने भौतिक ताक़त को भी मज़हब की हक़्क़ानियत के लिए कसौटी बना रखा था। यही वजह थी कि फ़तहे मक्का के बाद जिस क़दर अरब के लोगों ने इस्लाम क़ुबूल किया और कुफ़्फ़ार की फौजों की फौजें इस्लाम में दाख़िल हुई उससे पहले इस क़दर कसरत से इस्लाम की क़ुबूलियत के लिए लोगों के दिलों में जगह नहीं हुई थी। गोया मक्का का फ़तह हो जाना कुफ़्फ़ार के नज़दीक इस्लाम की हक़्क़ानियत के लिए बहुत बड़ा निशान था। चूंकि कुफ़्फ़ार के नज़दीक आम फ़तहों का उसूल भी ताजदारे मदीना सल्ल० की हक़्क़ानियत के लिए अपील था इस लिए भी तलवार उठायी गयी ताकि इन कमालात का इज़्हार

कर दिया जाए जो आक़ाए दोजहां की जामेअ् सिफ़ाते ज़िन्दगी में क़ुदरत ने पैदा किए थे।

रसूले अकरम (सल्ल०) की ख़ुसूसियत

रसूलल्लाहु सल्ल० ने बावजूद इसके कि इन्तिहाई मजबूरी की हालत में बचाव की पालिसी इख़्तियार की थी लेकिन फिर भी कम व बेश दस साल की मुद्दत में आपको तक़रीबन उनत्तीस ऐसी जगहों से मुक़ाबला करना पड़ा जिनमें ख़ुद सरकार सल्ल० को शिर्कत की नौबत आयी। इस तादाद ही से यह पता चलता है कि कुफ़्फ़ार किस क़दर यातना देने के दर पे थे। जिस शख़्स को दस साल में लगातार तीस बार दुश्मनों से रणशूर होने की नौबत आये और फिर उस के निश्चय व दृढ़ में ज़रा भी फ़र्क़ न आए, उस की हिम्मत, दिलेरी और बहादुरी की जिस क़दर तारीफ़ की जाए, कम है।

दुनिया की बड़ी-बड़ी जंगजू क़ौमों के कारनामे हमारे सामने हैं। बड़े-बड़े बहादुरों की तारीखी ज़िन्दगी के अफ़साने भी हमें मालूम हैं लेकिन हमारी नज़र से एक बहादुर भी आज तक ऐसा नहीं गुज़रा जिसे हर चौथे महीने कोई लड़ाई लड़नी पड़ी हो और फिर भी उसकी हिम्मत और बहादुरी में कोई फ़र्क़ न आया हो।

ग़ज़वात धर्मयुद्ध की तादाद

रसूलुल्लाह सल्ल० को जंग के ज़माने में निम्न मौक़ों पर लश्कर-कशी की नौबत आयी है—

ग़ज़्व-ए-बवात, ग़ज़्व-ए-अशीरा, ग़ज़्व-ए-सफ़वान, ग़ज़्व-ए-बदरे कुबरा, ग़ज़्व-ए-बनी सलीम, ग़ज़्व-ए-बनी क़तक़ाअ, ग़ज़्व-ए-सवीक़, ग़ज़्व-ए-क़िरक़िरतुलकदर, ग़ज़्व-ए-ज़ोअम्र, ग़ज़्व-ए-बहरान, ग़ज़्व-ए-अहद, ग़ज़्व-ए-हमराउय-असद, ग़ज़्व-ए-बनी नज़ीर, ग़ज़्व-ए-ज़ूरक़ाअ, ग़ज़्व-ए-बदरे अख़िरा, ग़ज़्व-ए-दूमतुल जिन्दल, ग़ज़्व-ए-हदीबिया, ग़ज़्व-ए-ख़ैबर, ग़ज़्व-ए-दालरुक़िरा,

ग़ज़्व-ए-उमरतुय क़ज़ा, ग़ज़्व-ए-मोता, फ़तेह मक्का, ग़ज़्व-ए-हुनैन, ग़ज़्व-ए-ताय, ग़ज़्वफ़.ए-तबूक ।

ये मौक़े हैं जिनमें रसूलल्लाहु सल्ल० को ख़ुद किसी-न-किसी हैसियत से शरीक होने की ज़रूरत पैदा हुई है। अगरचे ग़ज़्व-ए-मोता में थोड़ी दूर तक मशायअत (विदा के वक़्त थोड़ी दूर तक साथ चलना) फ़रमायी है।

सराया इनके अलावा हैं। हमने उन ग़ज़्वात की तादार पूरी बीस लिखी हैं। अगरचे मोर्रख़ीन ने सिर्फ़ सत्ताईस ही पर इक्तिफ़ा किया है और इसकी वजह महज़ यह है कि बाज़ ग़ज़्वा का मफ़्हूम आम कर दिया है और बाज़ के नज़दीक चन्द बातों की वजह से ग़ज़्वा का मफ़्हूम ख़ास हो गया है चुनांचे बाज़ ने ग़ज़्व-ए-मोता, उम्रतुल क़ज़ा, फ़तह मक्का को इस फ़िहरिस्त से अलग कर दिया है।

अगरचे इन तमाम ग़ज़्वात में से जंग की नौबत सिर्फ़ नौ ग़ज़्वात में आयी है जो निम्न हैं—बदर, उहुद, बनी अलमुस्तलक़, ख़ंदक़ क़रीज़ा, ख़ैबर, मक्का, हुनैन, तायफ़, बाक़ी ग़ज़्वात में या तो मुक़ाबला की नौबत नहीं आयी या दुश्मन से सुलह हो गयी, या दुश्मन पहले ही से भाग गया।

बहरहाल जहां क़त्ल व क़िताल (रक्तपात) की नौबत आयी है वह सिर्फ़ ऊपर ज़िक्र किए गए नौ मौक़े हैं।

सरकार सल्ल० की शान

हमें इस मज़मून में जो ख़ुसूसियत सरकारे दोआलम सल्ल० की पाठकगण को बतानी हैं, वह यह हैं कि दस साल के अरसा में तीस बार लड़ाई का सामना करना, लड़ाई के लिए मदीना से कूच करके जाना।

सामान की क़िल्लत, राशन की कमी, सवारी का अभाव इस्लहा

की कमी, दुश्मन की तादाद बाज़ मौक़ों पर तिगुनी, चौगुनी, आठ गुना बल्कि दस गुनी, फिर दुश्मन तमाम सामान से मुसल्लह, दुश्मन के मोर्चे और कमीनगाहें इन्तिहाई मज़बूत—और बावजूद इन तमाम बातों के आखिर में फ़तह रसूलुल्लाह सल्ल० की।

हैरत व इस्तेजाब (आश्चर्य)

पाठकगण को यह सुन कर हैरत होगी कि बाज़ ग़िज़वात में सहाबा (रज़ि०) के पास खजूरें ख़त्म हो गयीं तो दरख़्तों के पत्ते खाकर दुश्मन का मुक़ाबला किया। बाज़ ग़िज़वात में जब पांव में जूतियां न रहीं तो कपड़े और चीथड़े लपेट कर पथरीली ज़मीन पर सफ़र किया।

सवारी की क़िल्लत की यह नौबत थी कि एक सवारी और पांच सवार। इस्लहा की यह हालत कि बजाय तीर व तलवार के झोलियों में पत्थर भरे हुए। इस बेसरोसामानी की हालत में मुसल्लह और सुसंगठित फ़ौज से सिर्फ़ दस साल के अरसा में तीस बार लड़ने की तैयारी करना (यह वह तादाद है जिस में हुज़ूर सल्ल० स्वयं शरीक हुए हैं, बाक़ी तन्हा सहाबा (रज़ि०) के लश्करों को रवाना करना जिनको शरअ् की परिभाषा में सराया कहते हैं, उनकी तादाद बहुत ज़्यादा है। यह तीस मौक़े तो वह हैं जिनकी कमान ख़ुद हुज़ूर सल्ल० ने की है) और हर दफ़ा जंग में आख़िरी फ़तह का सेहरा मुसलमानों के सर होता। यह ऐसा अजीब व ग़रीब कारनामा है कि इस पर जिस क़दर हैरत का इज़हार किया जाए, वह कम है -

क्या दुनिया अपनी तमाम उम्र में ऐसा कोई फ़ातहे पेश कर सकती है?

اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى اٰلِ مُحَمَّدٍ

अल्ला हुम-म सल्लि अला मुहम्मदिंव-व इला आलि मुहम्मद ०

६ अगस्त १९४३

यौमे अशूरा और उसका हुक्म

हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से रिवायत है कि हुज़ूर सल्ल० ने फ़रमाया कि रमज़ान के बाद फ़ज़ीलत के एतबार से माहे मुहर्रम के रोज़े हैं और फ़र्ज़ नमाज़ के बाद तहज्जुद की नमाज़ का मर्तबा है।

(तिर्मिज़ी, नसई)

मुस्लिम और अबू दाऊद में है कि रसूलुल्लाहु सल्ल० से दरयाफ़्त किया गया कि फ़र्ज़ के बाद कौन-सी नमाज़ और रमज़ान के रोज़ों के बाद कौन-से रोज़े फ़ज़ीलत में ज़्यादा हैं तो हुज़ूर सल्ल० ने तहज्जुद की नमाज़ और मुहर्रम के रोज़े फ़रमाये। तिर्मिज़ी में जो रिवायत है उसके अल्फ़ाज़ ये हैं—

मैंने दरयाफ़्त किया कि आप मुझे रमज़ान के बाद कौन-से महीने के रोज़ों का हुक्म फ़रमाते हैं तो हुज़ूर सल्ल० ने इर्शाद फ़रमाया कि अगर तू रोज़ा रखना चाहता है तो माहे मुहर्रम के रोज़े रख क्योंकि यह अल्लाह का महीना है इसमें ख़ुदा ने एक क़ौम की तौबा क़ुबूल की थी और एक क़ौम की तौबा उसी दिन क़ुबूल करेगा।

शेख़ हसन बग़दादी हमरावी अपने रिसाला नफ़हाते नबविया फ़ी फ़ज़ायल अशूरिया में फ़रमाते हैं—

अशूरा-ए-मुहर्रम की फ़ज़ीलत में बहुत से आसार मरवी हैं मसलन इस दिन हज़रत आदम अलै० की तौबा क़ुबूल हुई और इसी दिन अर्श कुर्सी, आसमान और ज़मीन, चांद, सूरज और तारे पैदा किए गए। इसी दिन जन्नत पैदा की गयी और हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह अलै० इसी दिन पैदा हुए और इसी दिन नमरूद की आग से निजात हासिल हुई, इसी दिन मूसा अलै० और उनके हमराही फ़िरऔन की ग़ुलामी से आज़ाद हो लिए और फ़िरऔन अपने साथियों के साथ दरिया में ग़र्क़ किया गया। हज़रत नूह अलै० की किश्ती

जूदी पहाड़ पर इसी दिन ठहरी और हज़रत सुलैमान अलै० को एक अज़ीम मुल्क का मालिक इसी दिन बनाया गया। हज़रत यूनुस अलै० ने मछली के पेट से निजात इसी दिन पाई और इसी दिन याक़ूब अलै० की आंखों का नूर दोबारा लौटाया गया। हज़रत युसुफ़ अलै० भी इसी दिन कनआन के कुएं से निकाले गये थे और हज़रत अय्यूब अलै० ने इसी दिन अपने जानलेवा मर्ज़ से शिफ़ा पाई। आसमान से ज़मीन पर पहली बारिश मुहर्रम की अशरा के रोज ही हुई।

दसवीं तारीख का रोज़ा

रमज़ान की फ़र्ज़ियत से पहले दसवीं तारीख के रोज़ा का ख़ास बंदोबस्त था। रसूले ख़ुदा सल्ल० ख़ुद भी रोज़ा रखते थे और सहाबा रज़ि० को भी इस दिन के रोज़े की प्रेरणा दिलाते थे लेकिन रमज़ान की फ़र्ज़ियत के बाद अपनी प्रतिज्ञा और अतिरंजना को छोड़ दिया बल्कि हर शख्स को इख्तियार दिया गया कि जो चाहे इस दिन का रोज़ा रखे और जो चाहे तर्क कर दे। मुस्लिम शरीफ़ में जाबिर बिन समरा रज़ि० से रिवायत है कि—

'रसूले ख़ुदा सल्ल० आशूरा के दिन के रोज़ा के मुतअल्लिक़ हमको प्रेरणा देते थे और ख़ास तौर पर रोज़ा का वादा कराते थे लेकिन जब रमज़ान फ़र्ज़ हो गया तो आपने न तो हम को मना किया और न हुक्म दिया बल्कि प्रेरणा व प्रतिज्ञा को तर्क कर दिया।'

हज़रत आइशा रज़ि० फ़रमाती हैं कि रमज़ान की फ़र्ज़ियत से पहले आशूरा के दिन का रोज़ा रखा जाता था लेकिन रमज़ान की फ़र्ज़ियत के बाद यह रोज़ा इख्तियारी रह गया यानी मुस्तहब।

एक और रिवायत में हज़रत उम्मुलमोमिनीन रज़ि० का मन्क़ूल है—

'रमज़ान की फ़र्ज़ियत से पहले आशूरा का रोज़ा सब लोग रखते थे। उस दिन ख़ान-ए-काबा पर ग़िलाफ़ डाला गया था लेकिन

जब रमज़ान फ़र्ज़ हो गया तो हुज़ूर सल्ल० ने फ़रमाया जिस का जी चाहे वह रोज़े रखे और जो तर्क करना चाहे वह तर्क करे।'

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर फ़रमाते हैं कि हुज़ूर सल्ल० के सामने यौमे आशूरा का ज़िक्र किया गया तो आपने फ़रमाया कि इस दिन का रोज़ा ज़मान-ए-जाहलियत में रखा जाता था जिस का जी चाहे रखे और जिसका जी चाहे अफ़्तार करे।

हज़रत इब्ने मूसा से मरवी है कि यहूद आशूरा के दिन की इज़्ज़त करते थे और उस दिन को उन्हों ने ईद बना रखा था, रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया, तुम भी इस दिन का रोज़ा रखो।

और एक रिवायत में बजाए यहूद के यहूदे खैबर के बारे में यही अल्फ़ाज़ हैं। इसमें औरतों को ज़ेवर से सजाने का भी ज़िक्र है।

बुखारी व मुस्लिम में हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० से रिवायत है—

'रसूलुल्लाह सल्ल० जब मदीना तशरीफ़ लाए तो आपने यहूद को आशूरा को रोज़ा रखते हुए देख कर फ़रमाया कि यह रोज़ा कैसा? तो उन्होंने जवाब में कहा कि इस दिन मूसा अलै० ने रोज़ा रखा था। हुज़ूर सल्ल० ने फ़रमाया तुम से ज़्यादा तो मूसा के हम हक़दार हैं। आपने खुद भी रोज़ा रखा और रोज़ा का हुक्म भी दिया।'

अबू दाऊद में इतने अल्फ़ाज़ और हैं—

मूसा अलै० ने इसमें शुक्रिया का रोज़ा रखा और हम इस दिन में ताज़ीमन (आदर के कारण) रोज़ा रखेंगे।'

इब्ने अबी शैबा ने अबी हुरैरा का क़ौल नक़्ल किया है—

'आशूरा के दिन का रोज़ा रखो, इस दिन अंबियाए साबिक़ीन रोज़ा रखते थे सो तुमको भी रोज़ा रखना चाहिए।'

दैलमी और बुज़ार ने हज़रत अबी हुरैरा से नक़्ल किया है—

'यौमे आशूरा तुम से पहले गुज़रने वालों की ईद थी, तुम इस का रोज़ा रखो।'

रोजा का सवाब

तिर्मिजी ने हज़रत अबू क़तादा से नक़ल किया है—

'हुज़ूर सल्ल० ने फ़रमाया कि मुहर्रम के आशूरा के रोज़े का सवाब—खुदा से उम्मीद की जाती है कि पिछले एक साल के गुनाहों का कफ़्फ़ारा हो जाता है।'

तशब्बुह (सादृश्य) बिलयहूद की मुख़ालिफ़त

केवल आशूरा मुहर्रम के रोज़ा में चूंकि यहूद से सादृश्य का अन्देशा था इसलिए हुज़ूर सल्ल० ने फ़रमाया कि अगर मैं आइन्दा साल ज़िन्दा रहा तो नवीं तारीख का रोजा भी रखूंगा ताकि यहूद की मुख़ालिफ़त हो जाए और तशब्बुह बिल्यहूद लाज़िम न आयें लेकिन आइन्दा साल मुहर्रम तक हुज़ूर सल्ल० ज़िन्दा न रहे और विसाल (निधन) हो गया।

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० की रिवायत में है—

'अगर मैं आइन्दा साल ज़िन्दा रहा तो नवीं तारीख का रोज़ा भी रखूगा।'

दूसरी रिवायत में है कि जब हुज़ूर सल्ल० ने रोज़ा रखा और सहाबा रज़ि० को रोज़ा का हुक्म दिया तो बाज़ लोगों ने कहा कि यहूद के नज़दीक इस दिन की बहुत ज़्यादा इज़्ज़त है तो आपने फ़रमाया—

'इन्शाअल्लाह आइन्दा साल नवीं का रोजा भी रखूंगा ताकि यहूद से मुख़ालिफ़त हो जाए', लेकिन आइन्दा मुहर्रम से पहले हुज़ूर सल्ल० की वफ़ात हो गयी।

इब्ने अब्बास रज़ि० की एक और रिवायत में मुख़ालिफ़त का स्पष्टीकरण मौजूद है—

'अगर हम ज़िन्दा रहे तो यहूद की मुख़ालिफ़त करेंगे और नवीं

तारीख का रोज़ा भी रखेंगे।'

बाज़ हज़रात ने मुखालिफ़त की निर्भरता सिर्फ़ नौ तारीख के रोज़ा के साथ की है लेकिन यह सही नहीं है बल्कि मुखालिफ़त महज़ एक दिन की ज़्यादती से हासिल हो सकती है—ख्वाह नवीं तारीख से की जाए या ग्यारहवीं से जैसा कि इमाम अहमद ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० से रिवायत की है—

'यौमे आशूरा का रोज़ा रखो और इस दिन के साथ नवीं या ग्यारहवीं का रोज़ा मिलाकर यहूद की मुखालिफ़त करो।'

बैहक़ी ने भी शोबुलईमान में इस मज़मून की रिवायत नक़ल की है, इसके अल्फ़ाज़ यह हैं—

'अगर मैं ज़िन्दा रहा तो लोगों को नवीं या ग्यारहवीं के रोज़ा का भी हुक्म कर दूंगा।'

बस इन हदीसों को देखते हुए मालूम होता है कि यहूद की मुखालिफ़त मक़्सूद है ख्वाह वह नवीं का दिन मिलाने से हासिल हो जाए या ग्यारहवीं के मिलाने से।

बाल-बच्चों के ऊपर उदारता

रोज़ा के अलावा इस दिन बाल-बच्चों और मुस्तहक़ लोगों पर रोटी-कपड़े की उदारता और प्राचुर्य करने का भी हुक्म है जैसा कि इब्ने मस्ऊद रज़ि० से मन्क़ूल है—

'यानी जिस शख्स ने अपने बाल-बच्चों के लिए इस दिन उदारता की तो तमाम साल उसके यहां बरकत रहेगी।'

अगरचे इस हदीस के मुतअल्लिक़ बाज़ मुहद्दिसीन ने कलाम किया है और हाफ़िज़ इब्ने तैमिया रह० ने तो इस सम्बन्ध में किसी हदीस की रिवायत ही से इन्कार कर दिया है लेकिन सही यह है कि इस रिवायत के गवाह इस क़दर हैं कि अगर सबको जमा किया जाए तो रिवायत हसन (श्रेष्ठ) के दर्जा तक पहुंच जाती है जो क़ाबिले

इहतिजाज है।

और बैहक़ी के ज़ाहिरी कलाम का भाव है—

'इब्ने हब्बान के अलावा और मुहद्दिसीन भी इस रिवायत के श्रेष्ठ होने के क़ायल हैं।'

साहबे नफ़हात फ़रमाते हैं कि इस सम्बन्ध में सबसे ज्यादा सही सनद इब्ने अब्दुलवर की है जो जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ि० से मन्क़ूल है—

'मैंने रसुलुल्लाह सल्ल० को फ़रमाते हुए सुना कि जिसने अपने ऊपर और अपने बाल-बच्चों और मुस्तहक़ लोगों पर आशूरा के दिन उदारता की तो अल्लाह पूरे साल उस पर उदारता व बरकत नाज़िल करेगा।

उदारता और सोम रोज़ा के अलावा और कोई चीज़ साबित नहीं

आशूरा के दिन के मुताल्लिक़ बाज़ और बातें भी लोगों में मशहूर हैं लेकिन उनकी कोई असल नहीं। मसलन सुरमा लगाना, गुस्ल करना, इबादत करना, ज़ियारते आलम, नाख़ून कतरवाना, हज़ार वार सूर-ए-इख़्लास पढ़ना वग़ैरह—ये तमाम चीज़ें बेअसल बल्कि मौज़ूआत (रखी हुई) हैं जिन से मुसलमानों को परहेज़ करना चाहिए।

इस ही सिलसिला में अल्लामा ख़मरादी ने नफ़हाते नबविया में आख़िरी साल और शुरू साल के लिए दो दुआएं नक़्ल की हैं जिनको हम पाठकों के लिए नक़्ल करते हैं! इन दुआओं को अल्लामा जमालुद्दीन ने अपनी तारीख़ में शेख़ उमर बिन क़दामतुलमुक़्तदी से नक़ल किया है और अपने मशाइख़ (पीर) से इन दुआओं के मुताल्लिक़ बहुत-सी ख़ूबियों का ज़िक्र करते हुए फ़रमाते हैं कि हमारे मशाइख़ ख़ास तौर पर वसीयत करते हैं कि यह दुआएं ज़रूर पढ़ी जाएं।

शुरू साल की दुआ

ऐ अल्लाह आप की ज़ात अव्वल है और अपने अज़ीम फ़ज़्ल और क़ाबिले भरोसा बख़्शिश व करम के साथ क़ायम व दाइम (नित्य) है। और ऐ अल्लाह यह नया साल आ पहुंचा, इस साल के अन्दर शैतान और उसके मददगारों से हिफ़ाज़त की और बुराइयों की तरफ़ उकसाने वाले अपने उस नफ़्स के खिलाफ़ मदद की और ऐसे आमाल में मश्ग़ूलियत की जो मेरे मर्तबा को आप की ज़ात से क़रीब कर दे। आप से दरख़्वास्त करता हूं ऐ बुज़ुर्गी और करम वाले।

जब शुरू साल में कोई शख़्स इस दुआ को पढ़ता है तो शैतान कहता है कि उसने अपनी उम्र का बक़िया हिस्सा मुझसे महफ़ूज़ कर लिया।

आख़िर साल की दुआ

'ऐ अल्लाह ! इस साल मैंने आपके मना किये हुए कामों में से जितने काम किए हैं और उनसे अब तक तौबा नहीं की। और मेरी सज़ा पर क़ुदरत के बावजूद आपने अपने फ़ज़्ल व करम से इनके मुतअल्लिक़ मुझसे बुर्दबारी का मामला किया और आपकी नाफ़रमानी पर मेरी जुर्रत के बावजूद आपने मुझे तौबा की तरफ़ बुलाया, तो ऐ अल्लाह अब मैं आपसे मग़्फ़िरत तलब करता हूं बस मेरी मग़्फ़िरत कर दीजिए और ऐ अल्लाह इस साल में मैंने जितने काम आपकी मरज़ी के मुताबिक़ किए हैं और उन पर आपने सवाब का वादा फ़रमाया है तो मेरी दरख़्वास्त है कि उन तमाम को मेरी तरफ़ से क़ुबूल फ़रमा लीजिए और ऐ करीम मेरी इस उम्मीद को जो आपकी ज़ात से संबंधित है, कभी अलग न कीजिए।'

इस दुआ को तीन मर्तबा पढ़ना चाहिए जो शख़्स इस दुआ को पढ़ता है तो शैतान मायूसाना लेहजा में कहता है कि मेरी एक साला मेहनत को इसने एक घड़ी में बर्बाद कर दिया।

माहे शाबान और फ़ुज़ूलख़र्ची

जिस तरह फ़ुज़ूलखर्ची की निन्दा और उसकी बुराई से हर एक मुसलमान वाक़िफ़ है उसी तरह माहे शाबान की फ़ज़ीलत और उसकी बुज़ुर्गी से भी कम व बेश हर मुसलमान वाक़िफ़ है। शायद ही कोई ऐसा साल होगा जब मैंने मुसलमानों के लिए कुछ न लिखा हो। जहां तक मेरा हाफ़िज़ा काम करता है मैं कह सकता हूं कि विभिन्न शीर्षकों से अब तक शाबान और शबे बरात के मुताल्लिक़ जो कुछ लिखा गया है उसको अगर जमा किया जाए तो एक किताब हो सकती है।

आतशबाज़ी के मुतअल्लिक़ अगर एक तरफ़ मुसलमानों को माहे शाबान की फ़ज़ीलत से आगाह किया है तो दूसरी तरफ़ इन बिद्आत (धर्म में नई बातें) व मनहियात से भी आगाह किया है जिस में बदक़िस्मती से मुसलमान मुब्तिला हैं बिलख़ुसूस आतशबाज़ी की रस्म तो ऐसी है कि जिसकी ख़राबी और बुराई से किसी अक़्लमंद को भी इन्कार की गुंजाइश नहीं है। यह कोई अख़्लाक़ी मसला नहीं है जिस को बेकार में लम्बा किया जाए या उस पर किसी नयी बहस का दरवाज़ा खोला जाए। कौन नहीं जानता कि हर साल हज़ारों बेगुनाह इस निंदित और जानलेवा खेल के पीछे अपनी ज़िन्दगियां तबाह कर लेते हैं। लाखों रुपया चन्द दिन में आग की भेंट कर दिया जाता है। एक ग़रीब क़ौम महज़ अपनी जिहालत और बेवक़ूफ़ी के हाथों रुपया और ज़िन्दगी के बदले जहन्नम ख़रीद रही है।

'पस नहीं नफ़ा दिया उनको उनकी तिजारत ने और वह हिदायत याफ़्ता नहीं थे।'

गुनाह में कमी और ज्यादती

यह एक सर्वमान्य विषय है कि गुनाह पर ज़ुबान व मकान का खास असर होता है मसलन एक गुनाह दिल्ली के किसी बाज़ार में किया जाए और यही गुनाह मस्जिदे हराम में किया जाए या मआज़ल्लाह मस्जिदे नबवी में किया जाए। इसी तरह एक गुनाह किसी मामूली महीने में किया जाए और फिर यही गुनाह अरफ़ा के दिन किया जाए और फिर यही गुनाह शहरे रमज़ान में किया जाए। अगरचे गुनाह एक ही है लेकिन इस वजह से कि वह किसी मुक़द्दस मुक़ाम या किसी मुक़द्दस महीना में किया गया है। इसकी सज़ा सख्त और परिणाम दर्दनाक है। यह एक ऐसा व्यापक विषय है कि इस पर तो किसी इल्म वाले को इन्कार नहीं हो सकता, अगर मज़्मून के लम्बा हो जाने का अन्देशा न होता तो इसको प्रमाणों से साबित करना कुछ मुश्किल नहीं है।

इतनी बात मामूली समझ का इन्सान भी समझ सकता है कि शराब को बाज़ार में पीना और मस्जिद में पीना और मामूली दिनों में पीना और रमज़ान में पीना, इन दोनों में बड़ा फ़र्क़ है, यही वजह है कि रमज़ान में आम तौर से दुराचार में कमी हो जाती है। एक दुराचारी भी इस का एहसास करता है कि रमज़ान शरीफ़ का एहतराम किया जाए और इस महीने में गुनाह से बचा जाए।

इस प्रस्तावना के बाद आज के मज़्मून में मुझे सिर्फ़ दो बातें अर्ज़ करनी हैं। अव्वल यह कि माह शाबान को दूसरे महीनों पर कोई खास श्रेष्ठता हासिल है या नहीं और इस की पन्द्रहवी शब को दूसरी रातों पर कोई खास वरीयता साबित है या नहीं।

दूसरे यह कि आतशबाज़ी की रस्म बहिष्कृत व निंदित है या नहीं और फ़ुज़ूलखर्ची हज़रते हक़ की नाफ़रमानी और दोज़ख़ में जाने का कारण है या नहीं। अगर यह दोनों दावे पाठकों की समझ में आ गए तो मेरी गुज़ारिश का मतलब समझना कुछ मुश्किल न होगा।

व-मा तौफ़ीक़ी इल्ला बिल्लाह—चाहता है नहीं देता।
وَمَا تَوْفِيقِي إِلَّا بِاللهِ

पहला मुक़द्दमा

शाबान की बुज़ुर्गी और फ़ज़ीलत के मुतअल्लिक़ जो कुछ आज तक लिखा गया है उसके दोहराने की ज़रूरत नहीं है और न इस बहस की ज़रूरत है कि इस संबंध में जो हदीसें मंक़ूल हैं वह कमज़ोर हैं या शेख़ैन की शर्त पर नहीं हैं और न इस बात पर बहस करना मक़्सूद है कि लैलतुलबरात या लैलतुलमुबारक से मुराद वह शबे क़द्र है जो रमज़ान में आती है, इस मुख़्तसर मज़्मून में किसी लम्बी बहस की गुंजाइश नहीं है। फिर अहादीस भी इस क़दर आई हुई हैं जो यक़वी वअ्ज़ा वअ्ज़न की चरितार्थ हैं इसलिए इस बहस में मुब्तिला हो कर वक़्त को बर्बाद करने की ज़रूरत नहीं अगर वक़्त ने साथ दिया तो इन्शाअल्लाह फिर किसी मौक़ा पर तफ़्सील से अर्ज़ किया जाएगा।

शाबान के महीना में सबसे बड़ी ख़ुसूसियत तो यही है कि रसूलुल्लाहु सल्ल० इस महीना में बकसरत रोज़े रखते थे और शाबान को रमज़ान से मिला दिया करते थे। सरकारे दो आलम सल्ल० ने फ़रमाया है कि लोग इस महीने की बुज़ुर्गी से नावाक़िफ़ हैं, यह महीना रजब और शहरे रमज़ान के बीच है, इस महीना में लोगों की मौत और रिज़्क़ लिखा जाता है। इस महीने में बन्दों के आमाल पेश होते हैं। मेरी ख़्वाहिश यह है कि जब मेरे आमाल पेश हो रहे हों तो मैं रोज़े जैसी इबादत के साथ जुड़ा हुआ होऊं। इसी तरह पन्द्रहवीं शब में हुज़ूर सल्ल० का उम्मत के लिए इस्तिग़फ़ार करना और जन्नते बक़ीअ में तशरीफ़ ले जाना, हज़रत आयशा रज़ि० का तलाश करना और हुज़ूर सल्ल० का यह फ़रमान कि मुझसे जिब्रईल अलै० ने आकर कहा कि आज की रात सोने की नहीं है, इस शब में अल्लाह तआला, आसमाने दुनिया पर उतरना फ़रमाता है और तमाम गुनाहगारों को बख़्श दिया जाता है। आज

की रात अल्लाह तआला क़बील-ए-कल्ब की भेड़-बकरियों के बालों की तदाद के मुवाफ़िक़ लोगों को दोज़ख से आज़ाद करा देता है अलबत्ता मां-बाप का नाफ़रमान और शराब का आदी नहीं बख़्शा जाता और वह दो शख़्स भी नहीं बख़्शे जाते जो दिलों में कीना रखते हैं। इस क़िस्म की और बहुत-सी रिवायतें हैं जिनमें कमोबेश यही अल्फ़ाज़ हैं। और एक रिवायत दूसरी रिवायतों के लिए पृष्ठपोषण का कारण है।

बाज़ रिवायतों से यह भी मालूम होता है कि पन्द्रहवीं शब को इबादत करने और पन्द्रहवीं तारीख को रोज़ा रखने का हुक्म दिया गया है और इन तमाम अहादीसे नबवी सल्ल० के देखने से निम्न विशेषताएं साबित होती हैं—

हुज़ूर सल्ल० का इस महीने में बकसरत रोज़े रखना इस महीने में रमज़ान के हुसूल की दुआ करना, इस महीने की पन्द्रहवीं शब में हज़रते जल्ले मुजद्दहू का आसमाने दुनिया पर नुज़ूल फ़रमाना और गुनाहगारों को ब-कसरत बख़्शना, आइन्दा साल के लिए बन्दों के रिज़्क़, मौत और दूसरी बातों को तै फ़रमाना, आइन्दा साल के लिए इस क़िस्म के विषयों का फ़रिश्तों को संक्षिप्त इल्म होना, इस महीने की पन्द्रहवीं शब में इबादत करना, हुज़ूरे अक्रम सल्ल० का इस शब में मदीना के क़ब्रिस्तान में तशरीफ़ ले जाना, क़ब्रिस्तान में जाकर उम्मत की मग़फ़िरत के लिए दुआ करना, बक़ीअ में वापस आकर हुजर-ए-मुबारक में देर तक नमाज़ पढ़ना, इस महीने की पन्द्रहवीं तारीख को रोज़ा रखना, सरकारे दोआलम सल्ल० का इस महीने के लिए यह फ़रमाना कि रजब और रमज़ान के दरम्यान एक महीना है जिस की विशेषता से अकसर लोग नावाक़िफ़ हैं। यह तमाम विषय जिनका खुलासा मैंने अर्ज़ किया है इस समस्या की पथप्रदर्शक हैं कि माहे शाबान की हालत दूसरे महीनों की मानिन्द नहीं है बल्कि दूसरे महीनों से इस महीने को एक खास विशेषता और बड़ाई हासिल

है। रमज़ानुलमुबारक और ज़िलहिज्जा के अलावा यह कहा जा सकता है कि माहे शाबान को बाक़ी महीनों पर खास श्रेष्ठता और बड़ाई हासिल है और इस महीने में किसी गुनाह की वह हैसियत हरगिज़ नहीं है जो दूसरे महीनों में हुआ करती है क्योंकि यह बात पहले ही साबित है कि किसी मुक़द्दस मुक़ाम या किसी मुक़द्दस महीने में जुर्म करना उस से बहुत ज्यादा सख्त है जो किसी आम मुक़ाम या सादे दिनों में किया जाए।

दूसरा मुक़द्दमा

माहे शाबान और इसकी पन्द्रहवीं शब में जो खुसूसियात ज़िक्र की गई हैं उसके बाद सिर्फ़ इस बात की ज़रूरत बाक़ी रह जाती है कि उन आमाल पर बहस की जाए जिनकी शुरूआत मुसलमान इस मुक़द्दस महीने में करते हैं। इन आमाल में सबसे खराब रस्म जो आज के मज़मून में बहस के लिए है, वह आतशबाज़ी की रस्म है। आज तक इस सिलसिला में बेशुमार मज़मून और पोस्टर निकल चुके हैं। आम तौर से इस खराब और जानलेवा रस्म की बुराई में क़ुरआन शरीफ़ की आयत— اِنَّ المبذرين الخ —से दलील दी जा सकती है। इस में शक नहीं कि फ़ुज़ूलखर्ची की मनाही में यह आयत निहायत साफ़ और स्पष्ट है, इस से बढ़ कर फ़ुज़ूलखर्ची की निंदा और क्या हो सकती है। इन को शैतान का भाई कहा गया और फिर शयातीन को लफ़्ज़ कुफ़ूर यानी नाफ़रमान से ज़िक्र किया गया जिस का साफ़ मतलब यह है कि फ़ुज़ूलखर्ची सख्त अकृतज्ञ और नाफ़रमान हैं— अकृतज्ञता बिल्कुल ज़ाहिर है। माल व दौलत हज़रते हक़ जल्ले मुजद्दहू की एक नेमत है जिस का तक़ाज़ा यह था कि बन्दा अपने उपकारी का शुक्रिया अदा करता और इस दौलत को ऐसे कामों में खर्च करता जो हज़रते हक़ की रज़ामन्दी का कारण होती लेकिन जो शख्स अपनी दौलत को शरीअत के खिलाफ़ कामों में

खर्च करे और दुष्कर्मों में अल्लाह तआला की नेमत को बर्बाद करे तो उस से बढ़ कर अकृतज्ञता और क्या हो सकती है, यही वजह है कि इस आयत में फ़ुज़ूलखर्चों को अकृतज्ञ और काफ़िर कहा गया है। इस ही मज़मून को दूसरी आयत में एक और शीर्षक से बताया गया है जिस का ढंग इससे ज़्यादा कठोर और क्रोधयुक्त है। इर्शाद फ़रमाते हैं—

اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُسْرِفِيْنَ ـ

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुल्-मुस्रिफ़ीन०

खुदा तआला बेमौक़ा फ़ज़ूल खर्च करने वालों से मुहब्बत नहीं किया करते।

हम फ़ुज़ूलखर्ची और बेमौक़ा खर्च करने वालों से मुहब्बत करने को तैयार नहीं हैं। दोनों आयतों के शीर्षक अगरचे मुख्तलिफ़ हैं लेकिन दोनों को मिलाकर देखिए कि फ़ुज़ूलखर्ची से किस तरह नाखुशी का इज़हार किया गया है। इस मुहब्बत की अस्वीकृति वही हज़रात महसूस कर सकते हैं जिन को कभी हुस्न व इश्क़ की कठिनाइयों से दोचार होने का इत्तिफ़ाक़ हुआ है। ज़ाहिर शीर्षक अगरचे नर्म मालूम होता है क्योंकि इसमें शैतान का लफ़्ज़ है और न काफ़िर का सिर्फ़ नफ़रत का इज़हार है लेकिन फ़ुज़ूलखर्चों की इस से बढ़कर क्या बदक़िस्मती हो सकती है कि इन से मुहब्बत खत्म करने का एलान किया जाए अगर ग़ौर किया जाए तो यह नाक़ाबिले बर्दाश्त धमकी है कि जिस को सहन करना एक सच्चे मुसलमान के लिए नामुमकिन है। मानव-प्रेम और नश्वर हुस्न के इंसानों में हमने बार-बार सुना है कि बेचारा आशिक़ व चाहने वाला सब कुछ सुनने को तैयार हो सकता है, तमाम कड़वी व कसैली बातें सुनी जा सकती हैं, गालियां बल्कि मार-पीट भी एक आशिक़ के लिए सहल है, लेकिन यह सुनना गवारा नहीं है कि अब तुमसे हमारा कोई वास्ता

या तअल्लुक़ नहीं रहा। जब दुनियावी मुहब्बत और इश्क़ की यह हालत है तो ज़रा ग़ौर करो किसी नालायक़ बन्दे से हज़रते हक़ का यह फ़रमाना, 'अगर फ़ुज़ूलखर्ची से बाज़ नहीं आते तो फिर हमारी मुहब्बत से हाथ धो लो—किस क़दर दर्दनाक और खौफ़नाक है। पूछो उनसे जो इनकी मुहब्बत को जन्नत के बदले खरीदने को तैयार हैं। उन से पूछो जिनका यह क़ौल मशहूर है—

अल्लाह तआला के विसाल के वायदे पर अगर जहन्नम आशिक़ों का हिस्सा बन जाए तो हाय शौक़ उस का और अगर मुश्ताक़ीने जमाल के लिए बग़ैर वायदे जमाल (छवि) के जन्नत हिस्सा बन जाए तो हाय वावैला उस पर।

पूछो उन से जो सब कुछ सुनने को तैयार हैं लेकिन मुहब्बत का इन्कार उन के लिए नाक़ाबिले बर्दाश्त है। बनी इस्राईल की आयत में नाराज़गी सही, ग़ुस्सा सही, शयातीन का भाई और काफ़िर सही लेकिन ताल्लुक़ाते मुहब्बत व आशती का विच्छेद इसमें नहीं है।

सूरः आराफ़ की आयत में कमी है। अल्फ़ाज़ बहुत कम हैं लेकिन जो कुछ कहा गया है वह इतना खौफ़नाक है कि उसके मुक़ाबिले में मौत बल्कि दोज़ख की दहकती हुई आग भी आसान है। वह दोज़ख एक आशिक़ को सहल है जिस में मेहरबानी और नर्मी की किरनें मौजूद हों और वह जन्नत नाक़ाबिले बर्दाश्त है जिस में खुफ़गी, नाराज़गी और ग़ैर-मुहब्बत का मज़ाहिरा किया जा रहा हो, इस खुफ़गी और परेशां नसीबी के बाद भी बदक़िस्मत आतिशबाज़ों के लिए कोई गुंजाइश है कि वह अपने दीन व दुनिया को तबाह करें, शैतान बनें और खुदा की मुहब्बत से भी तही दामन हो जाएं।

अदम (अभाव) मुहब्बत की बहस

इस मौक़े पर बेजा न होगा अगर फ़ुज़ूलखर्ची करने वालों के साथ-साथ उन लोगों का भी ज़िक्र कर दिया जाए जो मुहब्बत के

अभाव की वईद (दण्ड की धमकी) में उन बदक़िस्मतों के साथ शरीक कर दिए गए हैं। मज़मून ज़रूर लम्बा हो जाएगा लेकिन जब एक चीज़ सामने आ गई है तो मैं चाहता हूं कि वह तमाम बातें मुसलमानों के सामने आ जाएं जिन के मुताल्लिक़ हज़रत हक़ जल्ले मुजद्दहू ने अदम (बिना) मुहब्बत का एलान किया है। मुझे अफ़सोस है कि मैंने इन्तिहाई जल्दी में इस मामले पर ग़ौर किया है। लेकिन फिर भी कलामल्लाह से निम्न बातें पेश कर रहा हूं—

स-यक़ूल, पारा २, सूर: बक़र: में है—

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुल मुअ्तदीन० اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ -

(अल्लाह तआला हद से गुज़र जाने वालों से मुहब्बत नहीं करता।)

ख़ामख़ाह हर किसी काफ़िर को क़त्ल न करो।

इसी पारा में हक़ सुब्हानहू का दूसरी जगह इर्शाद होता हैं—

वल्लाह ला युहिब्बुल फ़साद० وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الْفَسَادَ -

(अल्लाह तआला फ़साद को पसन्द नहीं फ़रमाते।)

तिल्करुसूल, पारा ३ में इर्शाद है— اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ كُلَّ كَفَّارٍ اَثِيْمٍ

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुल कुल्ल कुफ़्फ़ारिन असीम०

(अल्लाह तआला किसी नाफ़रमान गुनहगार से मुहब्बत नहीं करता।)

इसी पारा में सूर: आले इम्रान में इर्शाद होता है—

اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْكَافِرِيْنَ -

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुल काफ़िरीन॰ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْكٰفِرِيْنَ ۔

(अल्लाह तआला काफ़िरों को दोस्त नहीं रखता।)

इसी पारा में और इसी सूरः में दूसरी जगह इर्शाद होता है—

वल्लाह ला युहिब्बुज़ ज़ालिमीन॰ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الظّٰلِمِيْنَ ۔

(अल्लाह तआला ज़ुल्म करने वालों से मुहब्बत नहीं करता।)

वल्-मुह्सनात, पारा ५, सूरः निसा में रिश्तेदारों और पड़ोसियों के हुक़ूक़ की बहस में इर्शाद है—

اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ كَانَ مُخْتَالًا فَخُوْرًا ۙ

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बु मन का-न मुख़्तालन फ़ख़ूरा॰

(अल्लाह तआला ऐसे लोगों से मुहब्बत नहीं करता जो अपने को बड़ा समझते हुए शेख़ी की बातें करते हों, कंजूसी के आदी हों और अल्लाह तआला ने जो कुछ दिया हो वह उसको छिपाते हों।)

फिर इसी पारा में दूसरी जगह इर्शाद होता है—

اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ كَانَ خَوَّانًا اَثِيْمًا ۙ

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बु मन् का-न ख़व्वानन् असीमा॰

(अल्लाह तआला उस शख़्स को दोस्त नहीं रखता जो बद-दियानत और गुनहगार हो।)

फिर छठे पारा के शुरू में इर्शाद है—

لَا يُحِبُّ اللّٰهُ الْجَهْرَ بِالسُّوْٓءِ مِنَ الْقَوْلِ اِلَّا مَنْ ظُلِمَ ؕ

ला युहिब्बुल्लाहुल जह्र बिस्सूइ मिनलक़ौलि इल्ला मन ज़ुलिम॰

(अल्लाह तआला उस बात को पसन्द नहीं करता कि किसी बुरी बात का एलान किया जाए मगर हां मज़्लूम को इसकी इजाज़त है कि वह अपने ज़ालिम का ज़ुल्म बयान कर सकता है।)

इसी पारा के आख़िर में फ़रमाते हैं—

وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الْمُفْسِدِيْنَ

वल्लाहु ला युहिब्बुल मुफ़्सिदीन०
(अल्लाह तआला फ़साद करने वालों से मुहब्बत नहीं करता।)
पारा ८ में वही आयत है जिस की इस मज़्मून में बहस है—

إِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُسْرِفِيْنَ

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुल मुस्रिफ़ीन०
फिर इसी पारा के आख़िरी हिस्सा में इर्शाद होता है—

إِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुल मुअतदीन०
(अल्लाह तआला हद से गुज़र जाने वालों को दोस्त नहीं रखता।)
सूर: अन्फ़ाल में इर्शाद है—

إِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْخَائِنِيْنَ

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुल ख़ाइनीन०
(अल्लाह तआला ग़बन करने वालों से मुहब्बत नहीं करता।)
सूर: क़सस के आख़िरी हिस्सा में क़ारून का ज़िक्र करते हुए इर्शाद होता है—

إِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْفَرِحِيْنَ

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुल फ़रिहीन०
(अल्लाह तआला किसी इतराने वाले को दोस्त नहीं रखता।)
फिर इसी रुकूअ में अल्लाह तआला इर्शाद फ़रमाता है—

إِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُفْسِدِيْنَ

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुल मुफ़्सिदीन०
(अल्लाह तआला फ़साद करने वालों से मुहब्बत नहीं करता।)

सूरः रूम में इर्शाद है—

إِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْكٰفِرِيْنَ

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुल काफ़िरीन०

(ख़ुदा तआला नाफ़रमानों को दोस्त नहीं रखता।)

सूरः लुक्मान में फ़रमाते हैं—

إِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ كُلَّ مُخْتَالٍ فَخُوْرٍ

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बु कुल्ल मुख़्तालिन फ़ुख़ूर०

(बेशक अल्लाह तआला किसी घमण्डी, बिना वजह फ़ख़्र करने वालों को दोस्त नहीं रखता।)

सूरः शूरा में फ़रमाते हैं—

إِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الظّٰلِمِيْنَ

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुज़ ज़ालिमीन०

(अल्लाह ज़ुल्म करने वालों से मुहब्बत नहीं रखता।)

सूरः हदीद में इर्शाद है—

وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ كُلَّ مُخْتَالٍ فَخُوْرٍ

वल्लाह ला युहिब्बु कुल्लि मुख़्तालिन फ़ुख़ूर०

(अल्लाह तआला किसी इतराने वाले, शेख़ी करने वाले को पसन्द नहीं करता।)

इन तमाम आयतों के ज़िक्र करने में मैंने पूरी एहतियात की है लेकिन मुम्किन है कि शायद कोई और आयत रह गई हो। मेरा ख़्याल था कि इन तमाम आयतों का सम्बन्ध बयान कर देना भी बहुत मुनासिब था और लोगों को यह बता दिया जाता कि उन सब लोगों में (जिन से हज़रत हक़ सुब्हानहू ने अपनी दोस्ती और मुहब्बत का इन्कार किया) आपसी मुनासिबत क्या है लेकिन इस डर से कि मज़मून लम्बा हो जाएगा, इस बहस को छोड़ता हूं, इन्शा-

अल्लाह कभी आइन्दा इस बारे में लिखूंगा।

अगर इन बदक़िस्मत और निराश गिरोह के साथ उन लोगों का भी ज़िक्र कर दिया जाता कि जिनसे जनाब बारी इज़्ज़ इस्महू ने अपनी दोस्ती और मुहब्बत का इज़हार किया है मसलन—

إِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُقْسِطِيْنَ

इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुल मुक़्सितीन०

(ख़ुदा तआला न्यायनिष्ठ लोगों को पसन्द करता है।)

—तो शायद इस मज़्मून की तक्मील हो जाती और पढ़ने वाले दोनों वर्गों को आसानी से समझ लेते लेकिन मज़्मून के लम्बे होने की वजह से इसे पाठकगण से विवशता के साथ योंही छोड़ देते हैं।

आख़िरी तंबीह

आज के मज़्मून में क़ुरआन की आयतों से फ़ुज़ूलख़र्ची की बुराई पर तर्क किया गया है, एक बनी इस्राईल की आयत जिसमें फ़ुज़ूल-ख़र्च को शैतान का भाई कहा गया है और दूसरी सूर-ए-आराफ़ की आयत जिस में हज़रत हक़ सुब्हानहू ने फ़ुज़ूलख़र्चों से मुहब्बत के इन्कार का एलान फ़रमाया है। इन आयतों के अलावा आप को ताज्जुब होगा, फ़िरऔन को भी फ़ुज़ूलख़र्चों में शुमार किया गया है—

وَإِنَّهٗ لَمِنَ الْمُسْرِفِيْنَ

व इन्नहू ल-मिनल्-मुस्रिफ़ीन० (सूर: यूनुस)

(और वह फ़ुज़ुलख़र्चों में से है अलबत्ता।)

अब मतलब हुआ कि फ़ुज़ूलख़र्च न सिर्फ़ शैतान के भाई हैं बल्कि फ़िरऔन के भी साथी हैं। फ़िरऔन और आले फ़िरऔन का अंजाम जो कुछ हुआ उससे भी शायद कोई मुसलमान बे-ख़बर न होगा।

सूर-ए-मोमिन में जहां इन लोगों के अंजाम का ज़िक्र है वहां फ़रमाते हैं—

وَإِنَّ الْمُسْرِفِيْنَ هُمْ أَصْحَابُ النَّارِ ۝

व इन्नल्-मुस्रिफ़ीन हुम् अस्हाबुन्नार०

(फ़ुज़ूलख़र्च सबके सब जहन्नम वालों में से हैं।)

इस खुली हुई दण्ड की धमकी के बाद इस बदक़िस्मत गिरोह के पास कौन-सी हुज्जत है जिसकी पनाह लेकर आतिशबाज़ी की फ़ुज़ूल-ख़र्ची को जायज़ समझता है।

पढ़ने वालों को मालूम होगा कि पहली प्रस्तावना से माहे शाबान की फ़ज़ीलत और दूसरी प्रस्तावना से आतिशबाज़ी का फ़ुज़ूलख़र्च होना ज़ाहिर हो चुका। फ़ुज़ूलख़र्ची जैसी हराम चीज़ और वह भी माहे शाबान जैसे बुज़ुर्ग महीने में फ़ुज़ूलख़र्ची जैसा ख़राब और नाजायज़ काम और वह भी माहे शाबान की पन्द्रहवीं शब में जबकि अल्लाह तआला आसमाने दुनिया पर कृपा किए हों, दोज़ख़ से आज़ाद करने का इरादा करते हों और हम गुनाहगार ठीक उसी वक़्त आग का खेल खेल रहे हों और आसमान की जानिब आग उछाल रहे हों कितना ग़लत है।

(यह मज़मून १६३१ ई० में आपने गुजरात जेल में लिखा था।)

शाबान की पन्द्रहवीं शब

इसमें शक नहीं कि दुनिया की विभिन्न क़ौमें आपसी दोस्ती व इत्तिहाद की वजह से एक दूसरे की तहज़ीब व वेश-भूषा को क़ुबूल कर लेती हैं। वर्तमान तहज़ीब में भी बावजूद इसके कि हर क़ौम अपने आचार-व्यवहार और कल्चर की हिफ़ाज़त की दावेदार है, एक मुल्क की विभिन्न क़ौमें एक दूसरे की तहज़ीब को इख़्तियार कर लेती हैं और बाज़ दफ़ा एक क़ौम दूसरी क़ौम की तहज़ीब और उसके आचार-व्यवहार को इतना अपना लेती है कि यह पता लगाना

मुश्किल हो जाता है कि उस क़ौम का असली आचार-व्यवहार क्या है।

सियासी इक़्तिदार (सत्ता)

आम तरीक़े से यह तब्दीली सियासी सत्ता के कारण हुआ करती हैं जबकि एक क़ौम दूसरी क़ौम पर हाकिमाना इख़्तियार और शाहाना सत्ता के साथ हुकूमत करती है तो अपनी तह्ज़ीब और आचार-व्यवहार को भी हुकूमत की जाने वाली क़ौम पर थोप देती है, यह जरूरी नहीं कि यह थोपना जबर्दस्ती किया जाए बल्कि इन्सानी तबियत ही इस ढंग पर पैदा हुई है कि बिना वजह सत्ताधारी क़ौम के आचार-व्यवहार को वह पसन्द करती है। आज कल अंग्रेज़ किसी हिन्दुस्तानी को हैट लगाने या कोट-पतलून पहनने पर मजबूर नहीं करते लेकिन फिर भी पचीस फ़ीसद हिन्दुस्तानी अंग्रेज़ी फ़ैशन के प्रशंसक और मतवाले हैं। इस तादाद पर बस नही बल्कि इन प्रशंसकों की तादाद दिन-ब-दिन तरक़्क़ी करती नज़र आ रही है।

हर चन्द कि क़ौमी तह्ज़ीब के परिवर्तन में सियासी सत्ता को बड़ा दख़ल है लेकिन आपसी दोस्ती और मेल-मिलाप के असर से भी इन्कार नहीं किया जा सकता। आज मुसलमानों में सैकड़ों बिद्अतें (धर्म में नयी बातें) व ख़ुराफ़ातें इस तरह रायज हैं कि बाज़ जाहिल इनको इस्लाम का हिस्सा समझते हैं हालांकि इस्लाम में इसका वजूद भी नहीं। शादी व ग़मी की रस्में, सैकड़ों मेले व त्यौहार मुसलमानों की रोज़ की ज़िन्दगी में इस तरह दाख़िल हो गये हैं कि ग़ैर तो ग़ैर ख़ुद मुसलमान इनको मज़हबी चीज़ें ख़्याल करते हैं और इन ख़राब बातों की इस तरह पाबन्दी करते हैं कि अगर कोई शख़्स उनको समझाने और इन रस्मों से बाज़ रखने की कोशिश करे तो उसको अपना दुश्मन समझते हैं। इन ग़लत रस्मों को जाहिलों ने ऐसा अपना लिया है कि आज इस्लाम और मुसलमानों के घरों से इनका निकलना

ऐसा ही मुश्किल है जैसे कि नाखून को गोश्त से अलग करना। इन ख़राब रस्मों में, जिनसे मुसलमान आजकल अपनी माली हालत को तबाह कर रहे हैं, उनमें शबेबरात की भी बाज़ रस्में हैं जो बक़ौल हज़रत शेख़ अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी रह०—'आग की पूजा करने वालों और हिन्दुओं के त्यौहारों से उनमें दाखिल हो गयी हैं।

शाबान की फ़ज़ीलत

अगर एक तरफ़ जाहिल मुसलमान अपनी जिहालत की वजह से इन ख़राब रस्मों के पूरे पाबन्द हैं तो दूसरी तरफ़ बाज़ ऐसे भी लोग हैं जो इन तमाम बिद्अत और ख़राब बातों से घृणा करने वाले हैं बल्कि वह हर मज़हबी चीज़ को इस्लाम के असली रंग में देखना चाहते हैं और हमेशा यह मालूम करने में लगे रहते हैं कि नबी करीम सल्ल० की राह क्या है और उस पर अमल करने का तरीक़ा क्या है। ऐसे लोगों के लिए जो वास्तव में धर्म में नयी बातों और फ़ुज़ूल-ख़र्ची से बच कर मज़हब की सही और सीधी राह तलाश करना चाहते हैं और माहे शाबान और उसकी पन्द्रहवीं शब को इस्लामी रोशनी में देखना चाहते, उनके लिए हदीस की किताबों से हम निम्न हदीसें जमा कर देना चाहते हैं अगरचे इस थोड़ी-सी बात-चीत में हदीस की हैसियत से बहस करना मुश्किल है लेकिन इतना ज़रूर अर्ज़ कर देना चाहते हैं कि शाबान की फ़ज़ीलत और पन्द्रहवीं शब की विशेषताओं के बारे में किसी सही हदीस से प्रमाण देना मुश्किल है हां इतना कहा जा सकता है कि तमाम बातों को जमा करने के बाद इन हदीसों को हुस्न का मर्तबा हासिल हो सकता है और मुहद्दिसों (हदीस के विद्वान) के नज़दीक आमाल की अच्छाइयों में इनसे बढ़ोत्तरी भी है इसलिए जहां तक किसी नेक अमल करने का ताल्लुक़ है यह तमाम हदीसें जो हम नीचे दर्ज कर रहे हैं, काफ़ी हैं। ख़ुदा तआला मुसलमानों को अच्छे अमल की तौफ़ीक़ दे और उनको

बिद्अत (धर्म में नयी बातों) से बचाये। आमीन।

وَمَا ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ بِعَزِيْزٍ ۞

वमा ज़ालि-क अलल्-लाहि बि अ़ज़ीज़०

(और नहीं है यह काम ख़ुदा तआला पर मुश्किल।)

शाबान के मुतअल्लिक़ अहादीस

'शाबान का महीना रजब और रमज़ान के बीच एक महीना है जिसकी फ़ज़ीलत से लोग बेख़बर हैं। इस महीने में बन्दों के आमाल पेश किए जाते हैं। मेरा दिल यह चाहता है कि मेरे आमाल ऐसी हालत में पेश किए जायें कि मेरा शुमार रोज़ेदारों में हों।' (बेहक़ी)

'शाबान मेरा महीना है और रमज़ान अल्लाह तआला का महीना है।' (दैलमी)

हज़रत अनस की रिवायत में है—

'रजब का चांद देख कर नबी करीम सल्ल० फ़रमाया करते थे, या अल्लाह ! रजब और शाबान में हम को बरकत अता फ़रमा और हमको ख़ैरियत के साथ रमज़ान तक पहुंचा दे।' (इब्ने असाकिर)

'नबी करीम सल्ल० की आदत यह थी कि जब आप नफ़ली रोज़े रखने शुरू करते तो ऐसा मालूम होता था अब रोज़े नहीं छोड़ेंगे और जब रोज़े छोड़ देते थे तो तो ऐसा महसूस होता था कि अब आप रखेंगे ही नहीं, जिस महीने में आपको पूरे रोज़े रखते देखा वह रमज़ान है और जिस महीने ज़्यादा रखते देखा वह शाबान है।' (बेहक़ी)

हज़रत आइशा रज़ि० फ़रमाती हैं, मैंने किसी महीने में सिवाय शा'बान के महीने के आपको बकसरत रोज़े रखते नहीं देखा। शा'बान को तो यह समझना चाहिए कि पूरे महीने ही के रोज़े रखा करते थे।' (अबू दाऊद)

'नबी करीम सल्ल० को यह बात बहुत पसन्द थी कि शा'बान के रोज़े रखते हुए शा'बान को रमज़ान से मिला दिया जाए।'

(बैहक़ी)

नबी करीम सल्ल० सिवाय शा'बान के किसी दूसरे महीने में बकसरत रोज़े नहीं रखते थे। शा'बान के मुतअल्लिक़ तो यह कहना चाहिए कि पूरे महीने के रोज़े रखा करते थे और लोगों से यह फ़रमाया करते थे कि अमल अपने सामर्थ्य और ताक़त के अनुसार किया करो। अल्लाह सवाब देने से परेशान नहीं है बल्कि तुम अमल की कसरत से थक जाओगे।

हज़रत आइशा रज़ि० फ़रमाती हैं सिवाय रमज़ान और शा'बान के दूसरे महीने में नबी करीम सल्ल० लगातार रोज़ा नहीं रखा करते थे। (तिर्मिज़ी)

नबी करीम सल्ल० तमाम साल में सिवाय शा'बान के किसी और महीने के पूरे रोज़े नहीं रखा करते थे अलबत्ता शाबान के रोज़ों को रमज़ान से मिला दिया करते थे। (नसई)

हज़रत असामा रज़ि० ने अर्ज़ किया, या रसूलुल्लाह (सल्ल०) मैं आपको शा'बान में ज़्यादा रोज़े रखते हुए देखता हूं। फ़रमाया—

'यह शा'बान का महीना एक ऐसा है जो रजब और रमज़ान के बीच है लोग इस महीने की फ़ज़ीलत से अनभिज्ञ हैं। इस महीने में अल्लाह रब्बिल्-आलमीन के सामने बन्दों के आमाल पेश किए जाते हैं। मेरी ख्वाहिश है कि जब मेरे आमाल पेश हों तो मेरा शुमार रोज़ेदारों में हो।'

(नसई)

हज़रत आइशा रज़ि० की रिवायत में है, हज़रत ने इर्शाद फ़रमाया—

'अल्लाह तआला इस महीने में साल भर के मरने वालों को निश्चित फ़रमाता है, मेरा दिल यह चाहता है कि मेरी मौत का साल और वक़्त निश्चित किया जाए तो मेरा शुमार रोज़ादारों में

हो।'

हज़रत आइशा रज़ि० फ़रमाती हैं—

'मरने वालों का नाम ज़िन्दों से अलग कर दिया जाता है, आदमी निकाह करता है और उसका नाम मुर्दों की सूची में होता है। इन्सान हज को जाता है और उसका नाम मुर्दों के दफ़्तर में लिखा हुआ होता है।'

हज़रत आइशा रज़ि० की रिवायत है—

'एक औरत का ज़िक्र किया गया कि वह रजब में रोज़े बहुत रखती है तो हज़रत आइशा रज़ि० ने फ़रमाया, अगर इस औरत को नफ़्ली रोज़े रखने ही हैं तो शाबान में रखा करे क्योंकि शाबान को एक क़िस्म की फ़ज़ीलत हासिल है।'

हज़रत आइशा रज़ि० की एक रिवायत में है—

'कोई शख्स जो आइन्दा साल में मरने वाला है, उस का नाम शा'बान के महीने में निश्चित हो जाता है और वह ज़िन्दों की सूची से अलग करके मुर्दों की सूची में लिख दिया जाता है। मैं इस बात को पसन्द करता हूं कि जब मेरी मौत का वक़्त निश्चि हो रहा हो तो मैं अपने रब की इबादत में मश्गूल हूं।'

एक और रिवायत में है—

'इस महीने में उन लोगों के नाम मलकुल्मौत को लिखवा दिए जाते हैं, जो साल भर में मरने वाले होते हैं। मेरा दिल यह चाहता है कि जब मेरा नाम मलकुल्मौत लिख रहे हों तो मेरा शुमार रोज़ा-दारों में हो।'

पन्द्रहवीं शब

अता बिन यसार रज़ि० से रिवायत है—

'शाबान की पन्द्रहवीं शब को मलकुल्मौत के सामने एक रजिस्टर पेश कर दिया जाता है और हुक्म दिया जाता है कि पूरे साल

में मरने वालों के नाम इस रजिस्टर में से नक़ल कर लो।'

आदमी खेती-बाड़ी करता है, निकाह करता है, मकान बनवाता है और हाल यह है कि उसका नाम मुर्दों में लिखा होता है।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० की रिवायत में है—

'शा'बान से शा'बान तक मरने वालों के नाम मुर्दों की सूची में लिख दिए जाते हैं। इन्सान निकाह करता है, उसके यहां औलाद होती है मगर उसका नाम मुर्दों की सूची में लिखा हुआ होता है।'

हज़रत अकरमा रज़ि० की तफ़्सीर (व्याख्या) में है—

साल भर होने वाले वाक़िआत लिख दिए जाते हैं, पैदा होने वाले हज करने वाले वग़ैरह फिर इनमें कभी ज़्यादती नहीं होती।

हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि० की रिवायत में है—

'अल्लाह तआला शाबान की पन्द्रहवीं शब को आसमाने दुनिया पर नुज़ूल (उतरना) फ़रमाता है और हर गुनहगार की मग़फ़िरत (मुक्ति) कर देता है मगर मुश्रिक (बहु ईश्वरवादी) को नहीं बख़्शता और उन शख़्सों को भी नहीं बख़्शता जिनके दिल में एक दूसरे के लिए द्वेष और दुश्मनी होती है।' (बैहक़ी)

हज़रत अली रज़ि० की रिवायत में है—

'जब शाबान की पन्द्रहवीं शब हो तो उस रात में इबादत किया करो और पन्द्रहवीं तारीख़ को रोज़ा रखा करो। इस रात को अल्लाह तआला मग़रिब के वक़्त से आसमाने दुनिया पर अपनी रहमत के साथ नुज़ूल (उतरना) फ़रमाता है और यों इर्शाद फ़रमाता है—कोई बख़्शिश चाहने वाला हो तो उस को बख़्श दूं, कोई रिज़्क़ (रोज़ी) मांगने वाला हो तो उसको रिज़्क़ से मालामाल कर दूं, कोई बीमार हो तो उसको सेहत अता कर दूं। ग़र्ज़ इसी तरह एक-एक ज़रूरतमन्द को सुबहे सादिक़ (प्रात:) तक पुकारते रहते हैं।

हज़रत अली रज़ि० पन्द्रहवी शब को बाहर तशरीफ़ लाए और बार-बार आते रहे और आसमान की तरफ़ नज़र उठा कर देखते रहे

और फिर फ़रमाया—'हज़रत दाऊद (अलै०) भी इस रात को बाहर निकल कर आसमान को देखते थे और फ़रमाते थे—

'यह एक ऐसी घड़ी है कि इसमें अल्लाह तआला से जो दुआ मांगो वह क़ुबूल हो जाती है बशर्ते कि दुआ करने वाला टैक्स वसूल करने वाला न हो, जादूगर न हो ज्योतिषी न हो, ग़ैब की बातें बताने वाला न हो, जल्लाद और ज़ुल्म के साथ माल वसूल करने वाला न हो, जुआरी और गा-बजा कर रोज़ी कमाने वाला न हो।'

फिर आगे फ़रमाते हैं—

'अल्लाह तआला शाबान की पन्द्रहवीं शब में बंदों की जानिब रहमत के साथ मुतवज्जोह होता है और तमाम गुनहगारों को बख़्श देता है। मगर मुश्रिक, द्वेषी और गोद-पेट के रिश्तों को तोड़ने वाले नहीं बख़्शे जाते।'

फिर फ़रमाया—

'अल्लाह तआला चार रातों में बन्दों पर भलाई और बरकत नाज़िल करता है--ज़िल्हिज्जा की दसवीं रात, ईद की रात, शाबान की पन्द्रहवीं रात (इस रात में लोगों की मौत, उनकी रोज़ी और हज करने वालों की तादाद लिखी जाती है) और चौथी अरफ़ा की रात है—सुबह की अज़ान तक बन्दों के साथ रहमत व मग़्फ़िरत (मुक्ति) का मामला होता रहता है।'

हुज़ूर सल्ल० ने फ़रमाया—

'मेरे पास जिब्रील अलै० तशरीफ़ लाए और उन्होंने कहा—

'यह शा'बान की पन्द्रहवीं रात हैं इसमें क़बीला कल्ब की भेड़ियों के बालों की तादाद के बराबर गुनहगार दोज़ख़ से आज़ाद किये जाते हैं।'

हज़रत आइशा रज़ि० की रिवायत में है कि मैंने एक दिन हुज़ूर सल्ल० को नहीं पाया। मैं आपको तलाश करने निकली तो मैंने आप को बक़ीअ़ में देखा कि आप अपना सर उठाए हुए आसमान को देख

रहे हैं। यह देख कर फ़रमाया—

'ऐ आइशा ! क्या तुझ को यह खतरा लाहिक़ (मिलने वाला) हुआ कि अल्लाह और उसका रसूल तेरे हक़ में बाधा डालेगा।'

मैंने अर्ज़ किया, हुज़ूर (सल्ल०) मैंने यह खयाल किया कि आप दूसरी बीवियों के पास तशरीफ़ ले गये हैं। सरकार (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया—

'अल्लाह तआला शा'बान की पन्द्रहवीं शब को आसमाने दुनिया पर नुज़ूल (उतरना) फ़रमाता है और क़बीला कल्ब[1] की बकरियों के बालों की तादाद से ज़्यादा गुनहगारों को बख्श देता है।'

आगे फ़रमाते हैं—

'जब शा'बान की पन्द्रहवीं शब होती है तो अल्लाह तआला अपनी मख्लूक़ (संसार) पर रहमत की नज़र डालता है और मुसलमान मर्दों और औरतों की मग़्फ़िरत कर देता है। काफ़िरों को मुहलत देता है, द्वेषी लोगों को छोड़ देता है जब यहां तक कि वह अपने मन में द्वेष रखने वाली भावना से बाज़ आ जाएं।'

इब्ने क़ाने' की रिवायत में है—

'अल्लाह तआला इस रात में मुश्रिक़, गोद-पेट के रिश्तेदारों को छोड़ने वालों, मां-बाप के नाफ़रमान, घमण्ड और दिखावे की दृष्टि से टख़नों से नीची पाजामा रखने वालों और शराबी को रहमत की नज़र से नहीं देखता।'

फिर फ़रमाते हैं—

'शाबान की पहली रात को हर शख्स का नाम मलकुलमौत को लिखवा दिया जाता है जो आइन्दा साल में मरने वाला होता है। इन्सान निकाह भी करता है, खेती-बाड़ी भी करता है और ज़ुल्म व

---

१. कल्ब अरब का एक क़बीला है, जिसमें बकरियां और भेड़ें कसरत से होती हैं।

व्यभिचार भी करता है और नाम उसका मुर्दों की सूची में होता है।'

हज़रत आइशा रज़ि० फ़रमाती हैं इत्तिफ़ाक़ से एक दफ़ा शा'बान की पन्द्रहवीं रात मेरी रात थी। जब आधी रात गुज़री तो मैंने हुज़ूर सल्ल० को न पाया। मैं आप को तलाश करने निकली और आम तौर से जो औरतों में ग़ैरत होती है वही ग़ैरत मुझे भी आई। मैंने अपनी चादर ओढ़ी और सब बीवियों की कोठरियों में आपको तलाश करती फिरी। जब हुज़ूर सल्ल० को कहीं न पाया तो मजबूरन लौट कर अपने कक्ष में वापस आयी तो देखा कि आप एक कपड़े की तरह ज़मीन पर सज्दा में सर रखे हुए फ़रमा रहे हैं—

'मेरा ख़याल और मेरा दिल तेरे लिए सज्दा में है और मेरा दिल तुझ पर ईमान लाया बस यह हैं मेरे हाथ और जो कुछ मैंने अपने ऊपर किया है, ऐ बुज़ुर्ग और सर्वश्रेष्ठ! तुझ से हर बड़ी चीज़ की उम्मीद की जाती है तो मेरे बड़े गुनाह बख़्श दे। मेरा चेहरा उस ज़ात के लिए सज्दा में है जिसने इसको पैदा किया, सूरत बनाई और कान और आंख दी।'

फिर आपने सज्दे से सर उठाया और दोबारा सज्दा किया और दूसरे में फ़रमाया—

'मैं पनाह मांगता हूं तेरे रिज़ा (प्रसन्नता) की तेरी नाराज़गी से और तेरी मुआफ़ी की तेरे क्रोध से और तेरी तुझ से जैसा कि तूने तारीफ़ की अपनी वैसा ही है मैं कह रहा हूं जैसा दाऊद ने कहा तो मेरे चेहरे को जो कि मिट्टी में है, बख़्श दे।'

फिर आपने सज्दा से सर उठाया और फ़रमाया—

'ऐ अल्लाह! मुझे मज़बूत और शिर्क से महफ़ूज़ दिल दे जो हक़ का नक़ीब (चोबदार) हो, दुराचारी और निष्ठुर न हो।'

फिर मेरी चादर में आकर लेटे, तो मेरा सांस चढ़ा हुआ था, मुझसे फ़रमाया, ऐ आइशा यह क्या बात है? मैंने आपको सारे मामला की ख़बर दी, तो आप मेरे घुटने दबाने लगे और फ़रमाते

थे—

'अफ़सोस इन घुटनों पर, यह घुटने आज की रात थक गये। यह रात तो ऐसी है कि इस में अल्लाह तआला आसमाने दुनिया पर तशरीफ़ लाते हैं और अपने बन्दों पर बख़्शिश कर देते हैं मगर मुश्रिक और द्वेष रखने वाला नहीं बख़्शा जाता।' (बैहक़ी)

हज़रत आइशा रज़ि० की एक रिवायत में है कि हुज़ूर सल्ल० मेरे यहां तशरीफ़ लाये और अभी कपड़े नहीं उतारने पाये थे कि यकायक खड़े हो गये और तशरीफ़ ले गये, मैं ग़ैरत की मारी सारे कक्षों में ढूंढती फिरी और आख़िर आपको बक़ीअ़ में पाया कि आप क़ब्रिस्तान में मोमिनीन और मोमिनात (मुसलमान मर्दों और स्त्रियों) और शहीदों के लिए दुआ मांग रहे थे। मैंने अर्ज़ किया, मेरे मां-बाप आप पर क़ुर्बान हों, आप अपने रब के काम में मसरूफ़ हैं और मैं दुनिया की इच्छा में लगी हूं। मैं वहां से लौट आयी। जब हुज़ूर सल्ल० वापस आये तो मेरा सांस चढ़ा हुआ था। हुज़ूर सल्ल० ने दरयाफ़्त किया तो मैंने सारा क़िस्सा सुनाया। हुज़ूर सल्ल० ने फ़रमाया, मेरे पास जिब्रील अलै० ने आकर कहा था कि यह शा'बान की आधी रात है। इस रात में अल्लाह तआला क़बीला कल्ब की बकरियों के बालों की तादाद में लोगों को दोज़ख़ से आज़ाद करता है मगर मुश्रिक, द्वेषी, निष्ठुर, मां-बाप का नाफ़रमान और सदा शराब के नशे में रहने वाला नहीं बख़्शा जाता। इसके बाद हुज़ूर सल्ल० ने अपने कपड़े रखे और मुझसे फ़रमाया, ऐ आइशा! अगर तुम इजाज़त दो तो मैं इस रात ख़ुदा तआला की इबादत कर लूं। मैंने अर्ज़ किया कि बड़ी ख़ुशी से। आप खड़े हुए और नमाज़ में इतना लम्बा सज्दा किया कि मैं समझी वफ़ात हो गयी। मैंने हुज़ूर सल्ल० के तलुवों को हाथ लगाया तो आपने हरकत की। मैं ख़ुश हुई और यह समझी कि आप ज़िन्दा हैं। मैंने सुना कि आप सज्दे में दुआ फ़रमा रहे थे—

मै पनाह मांगता हूं तेरी मुआफ़ी की तेरे क्रोध से और मैं पनाह मांगता हूं तेरी रिज़ा (प्रसन्नता) की तेरी नाराज़ी से और मैं पनाह मांगता हूं तेरी तुझ से, अज़ीम है तेरी ज़ात, मैं सना (स्तुति) का शुमार नहीं कर सकता हूं, तू ऐसा ही है जैसा तूने अपने बारे में कहा।'

जब सुबह हुई तो मैंने अर्ज़ किया, या रसूलुल्लाह आप रात को यह दुआ पढ़ रहे थे, फ़रमाया—'यह कलिमात सीख ले और दूसरों को भी सिखा दे। मुझे जिब्रईल ने यह कलिमात सिखाये हैं और मुझ से कहा कि मैं इन कलिमात को सज्दे में बार-बार पढ़ा करूं।'

(बैहक़ी)

हज़रत अब्दुलहसन विक्री फ़रमाते हैं, इस रात को बेहतर यह है कि वह दुआ पढ़े जो शबे क़द्र के मुतअल्लिक़ आयी हुई हैं—

'ऐ अल्लाह तू बेशक मुआफ़ करने वाला है, मुआफ़ी को पसन्द करता है तू मुझे मुआफ कर दे। ऐ अल्लाह मैं तुझ से मुआफ़ी और शांति मांगता हूं ऐसी जो हमेशा हो, दुनिया में भी और आख़िरत में भी।'

चूंकि यह रात शबे क़द्र के बाद बहुत ही बढ़िया रात है इसलिए इसमें भी यह दुआ पढ़ना चाहिए। और बाज़ हज़रात से रिवायत किया गया है कि इस रात को वह दुआ पढ़े जो हज़रत आदम अलै० ने तवाफ़ (परिक्रमा) के वक़्त मुक़ामे इब्राहीम पर दो रक्अतें पढ़ने के बाद मांगी थी।

हज़रत आदम अलै० की दुआ—

'ऐ अल्लाह ! तू मेरी छिपी और खुली को जानता है, तू मेरी मजबूरी क़ुबूल कर ले और तू मेरी ज़रूरतों को जानता है तू मेरा सवाल पूरा कर दे और तू जो कुछ मेरे दिल में जानता है तू बख्श दे मेरे गुनाह। मैं तुझ से ऐसे ईमान का सवाल करता हूं जो मेरे दिल में समा जाए और सच्चे यक़ीन का जब तक कि मैं जान लूं कि

जो तूने लिख दिया है वही मुझ को मिलेगा और अपने फ़ैसले पर मुझे राज़ी कर दे।'

इस दुआ के बाद इर्शाद हुआ, 'ऐ आदम मैंने तेरी दुआ क़ुबूल कर ली और जो तेरी औलाद में से यह दुआ करेगा, उस की भी दुआ क़ुबूल कर लूंगा।'

(२५ अगस्त १९७३ ई०)

—०—